खण्ड–3
लिपि

खण्ड 3 का परिचय

इकाई–11 में **लिपि की परिभाषा, उद्भव एवं विकास** के अन्तर्गत लिपि के उद्भव एवं विकास, लिपि के विकास चरणों चित्रलिपि, भावलिपि एवं ध्वनिलिपि और ध्वनिलिपि के अन्तर्गत अक्षरात्मक, वर्णात्मक एवं रेखाक्षरात्मक तथा भारत में लिपि विज्ञान एवं लेखन कला के बारें में तथा भारत में बहुत सी भाषाएँ तो हैं ही, उनके लिखने के लिए भी अलग–अलग लिपियाँ प्रयोग की जातीं हैं। किन्तु इन सभी लिपियों में बहुत ही साम्य है। ये सभी वर्णमालाएँ एक अत्यन्त तर्कपूर्ण ध्वन्यात्मक क्रम में व्यवस्थित हैं। इस प्रकार प्राचीन भारत की दो लिपियाँ प्रथम खरोष्ठी और द्वितीय ब्राह्मी है। इस प्रकार **इकाई–12 भारत की प्रमुख लिपियाँ और उनके विशेषताएँ** के अन्तर्गत भारत की प्रमुख लिपियाँ ब्राह्मी,खरोष्ठी एवं सिन्धुघाटी लिपि तथा उनकी विशेषताओं का अध्ययन किया जायेगा। **इकाई–13** में **ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (भारत और विदेश)**के अन्तर्गत ब्राह्मी लिपि एवं उसका नामकरण, ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति विदेश में जैसे चीनी लिपि से, ग्रीक या फोनीशी लिपि से, सामी लिपि से उत्पत्ति तथा ब्राह्मी लिपि उत्पत्ति भारत में एवं ब्राह्मी के द्वारा भारत में लिपियों का विकास जैसे ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित शैलिया एवं दक्षिणी शैली से विकसित लिपियाँ एवं **इकाई–14 लेखन साधन–पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि** के अन्तर्गत लेखन साधन पत्थर , स्तम्भ, एवं धातुओं के प्लेट सोना, ताँबा, पीतल, कांसा, लोहा और पेन, ब्रश, रंग इत्यादि के बारें में अध्ययन किया जायेगा।

इकाई 11 लिपि की परिभाषा, उद्‌भव एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- लिपि के उद्‌भव एवं विकास के बारें में जान सकेंगे।
- लिपि के विकास चरणों चित्रलिपि, भावलिपि एवं ध्वनिलिपि के बारें में जान सकेंगे।
- ध्वनिलिपि के अर्न्तगत अक्षरात्मक, वर्णात्मक एवं रेखाक्षरात्मक के बारें में जान सकेंगे।
- भारत में लिपि विज्ञान एवं लेखन कला के साक्ष्य के बारें में जान सकेंगे।
- प्रयुक्त तकनीकि शब्दावली के बारें में जान सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

मानव की प्रवृत्ति है कि वह अपने कार्यों और विचारों को स्थायित्व प्रदान करना चाहता है। इसके लिए वह ऐसे साधनों का उपयोग करता है, जिससे उसके विचार आगे की पीढ़ी तक पहुँच सकें। इन्हीं गूढ विचारों ने लिपि को जन्म दिया। क्योंकि भाषा का सम्बन्ध ध्वनियों से है। ध्वन्यात्मक भाषा वक्ता के मुख से निकल कर श्रोता के कान

तक पहुँचकर अपना प्रभाव प्रकट करती है। यह वाचिक भाषा है। वक्ता के मुख से निकलने के कुछ क्षणों बाद इसका स्वरूप नष्ट हो जाता है। अब प्रश्न उठता है कि इसका प्रारम्भिक रूप क्या था, यह आज बताना संभव नहीं है, परन्तु अनुमान है कि अपने भावों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम चित्रात्मक लिपि का प्रयोग हुआ, तत्पश्चात् भावलिपि और अन्ततः ध्वनिलिपि। इस प्रकार **इकाई–11** में **लिपि की परिभाषा, उद्भव एवं विकास** के अर्न्तगत लिपि के उद्भव एवं विकास, लिपि के विकास चरणों चित्रलिपि, भावलिपि एवं ध्वनिलिपि और ध्वनिलिपि के अर्न्तगत अक्षरात्मक, वर्णात्मक एवं रेखाक्षरात्मक तथा भारत में लिपि विज्ञान एवं लेखन कला के बारें में अध्ययन किया जायेगा।

11.2 लिपि का उद्भव

लिपि की उत्पत्ति कब और कैसे हुई यह इतना ही विवादग्रस्त है, जितना कि भाषा की उत्पत्ति। भाषा और लिपि की उत्पत्ति के विषय में अन्ततः अनुमान का ही आश्रय लेना पड़ता है। भाषा सूक्ष्म है, अतः उसकी उत्पत्ति बताना अधिक कठिन है। लिपि की उत्पत्ति भी बताना प्रायः उतना ही कठिन है, क्योंकि प्रारम्भ में जिन वस्तुओं पर ये लिपियाँ लिखीं गईं, वे काल कवलित हो गईं हैं। पाषाण, स्तम्भ, ताम्र आदि पर जो कुछ चीजें लिखीं गईं, वे 6 हजार वर्ष तक का इतिहास बतातीं हैं। इनमें भी एकरूपता नहीं है। कहीं कुछ लकीरें, कहीं पशु आदि की आकृति, कहीं भावमुद्रा और कहीं लिपि है। इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लिपि के विकास की मुख्यतया तीन अवस्थाएँ रहीं हैं– 1.चित्रलिपि 2.भावलिपि 3. ध्वनिलिपि।

अपनी–अपनी मान्यता के अनुसार विश्व के विभिन्न देशवासियों ने अपनी भाषा का जनक किसी देवता को माना है। भारतीयों ने ईसा पूर्व 6वीं शताब्दी में ब्राह्मी लिपि का जन्मदाता ब्रह्मा को माना है। इसी प्रकार मिस्त्री लोगों ने **हायरोग्लिफिस** लिपि को **थॉठ**, बेबिलोनिया वालों ने कीलाक्षरा लिपि को **नेबो** को प्राचीन यहूदियों ने **मूसा** को और यूनानियों ने ग्रीस लिपि का हर्मेस को चीन वालों ने चीनी लिपि का बेनचोंग को, इजराइल ने हिब्रू लिपि का जेहोवा को फिनिश्या ने उत्तरी सेमेटिक लिपि का कैडमस को तथा रोम ने रोमन लिपि का मर्करी को तथा अरब ने अरबी लिपि का अल्लाह/आदम को एवं भारत में खरोष्ठी लिपि का ऋषभदेव को अपनी–अपनी लिपि का जन्मदाता माना है।

आज तक उपलब्ध सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राचीनतम उपलब्ध सामग्री 4000 ई. पू. तक की है। इस प्रकार प्राचीनतम लिपि चिन्ह 6 हजार वर्ष पूर्व तक के मिलते हैं।

11.3 लिपि विकास के चरण

लिपि विकास के मुख्यतया तीन चरण हैं–1. चित्रलिपि 2. भावलिपि 3. ध्वनिलिपि। इनके अतिरिक्त तीन भेद और माने जाते हैं। ये गौण भेद हैं। इनका उल्लेखमात्र पर्याप्त है।

11.3.1 चित्र लिपि

यह लिपि का प्राचीनतम रूप था। जिस वस्तु का वर्णन करना होता था, उसका चित्र बना देते थे। आदमी, स्त्री, आँख आदि के लिए उस जैसा छोटा चित्र बना देते थे।

इससे संबद्ध व्यक्ति भाव समझ जाता था। ऐसे प्राचीन चित्र फ्रांस, स्पेन, यूनान, इटली, मिस्त्र आदि से मिले हैं। ये पत्थर, हड्डी, हाथी दाँत, सींग, छाल, मिट्टी के पात्रों आदि पर होते थे।

1. **गुण**

- वस्तु का तुरन्त बोध,
- सर्वजन सुबोधता,
- शिक्षण की अनावश्यकता

2. **दोष**

- संकेत अनन्त बनाने पड़ते थे। प्रत्येक वस्तु के लिए पृथक् संकेत होता था। व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का बोध नहीं हो सकता था।
- अमूर्त भाव एवं विचार प्रकट नहीं हो सकते थे।
- चित्र बनाना श्रमसाध्य कार्य था। शीघ्रता में चित्र नहीं बन सकता था।
- अधिक समय की अपेक्षा होती थी।
- ध्वनिलिपि की अपेक्षा स्थान अधिक होता था।
- स्थान समय आदि का बोध स्पष्ट रूप से नहीं हो सकता था।

11.3.2 भाव लिपि

यह लिपि विकास का द्वितीय चरण था। चित्रलिपि अधिक श्रम साध्य थी, अतः लघुतर उपाय सोचने की प्रक्रिया भी जारी रही। फलस्वरूप भावलिपि का प्रादुर्भाव हुआ। चित्रलिपि और भावलिपि में अन्तर यह है कि चित्रलिपि में केवल वस्तु का चित्र बनाया जाता था। भावलिपि में चित्रों को सरल बनाया गया और साथ ही उनसे संबद्ध अर्थ भी लिए गए। जैसे–सूर्य के लिए एक गोला बनाना, उससे गर्मी, धूप, प्रकाश, दिन आदि का अर्थ बताना। रोने के लिए आँख का चित्र बनाकर उससे आँसू टपकती बूँदे दिखाना। इस प्रकार की लिपि के उदाहरण उत्तरी अमेरिका, चीन, अफ्रीका आदि में मिलते हैं। चीनी लिपि में आज भी अनेक ऐसे शब्द हैं, जो भावलिपि मूलक हैं। जैसे मनुष्य के लिए जेन में ऊपर खड़ी लकीर, नीचे दो तिरछी लकीरें। ऊपर धड़ हो गया, नीचे दो पैर।

यह चित्र लिपि का विकसित रूप है। चित्र बनाने की क्लिष्टता कुछ कम हुई। एक चित्र से अनेक अर्थ प्रकट होने लगे। यह चित्राभास लिपि हुई। इसमें भी पूर्ववत् दोष विद्यमान रहे। सूक्ष्म भावों को व्यक्त नहीं किया जा सकता था। किस चित्र से क्या भाव लिए जाएँगे, इसमें समरूपता नहीं थी।

वर्तमान काल में उपलब्ध सिन्धु घाटी की लिपि भावात्मक लिपि का एक उदाहरण है। इससे भारतीय अक्षरात्मक लिपि की उत्पत्ति की संभावना व्यक्त की जाती है। सिन्धु घाटी की भाषा के ज्ञात न होने तथा भाषा के साथ पूर्वाग्रह होने के कारण इसकी लिपि को विभिन्न दावों के बावजूद जाना नहीं जा सका है।

11.3.3 ध्वनि लिपि

यह लिपि विकास का तृतीय चरण था। यह मानव की लिपि सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि थी। इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए कुछ संकेत निर्धारित किए गए। इनसे

मुखोच्चरित प्रत्येक ध्वनि को लिपि बद्ध किया जा सकता था। देश–काल के भेद से ये ध्वनिलिपियाँ अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग विकसित हुईं। इस प्रकार की लिपियाँ हैं–देवनागरी, रोमन, अरबी आदि।

समय तथा स्थान के भेद से कुछ विद्वानों ने ध्वनिलिपि के तीन भेद किए हैं–1. अक्षरात्मक 2. वर्णात्मक 3.रेखात्मक।

- **अक्षरात्मक**–अक्षरात्मक में चिन्ह किसी अक्षर को व्यक्त करता है। इसमें देवनागरी को अक्षरात्मक में रखा जाता है। देवनागरी पूर्णतया वर्णात्मक लिपि है। प्रत्येक वर्ण के लिए स्वतन्त्र क् आदि चिन्ह हैं। केवल लेखन की सुविधा के लिए वर्णमाला में व्यंजनों को हलन्त (क्, ख्, ग्) न लिखकर अकारान्त (क, ख, ग आदि) लिखा जाता है।

- **वर्णात्मक**–वर्णात्मक में चिन्ह वर्ण को व्यक्त करता है। रोमन को वर्णात्मक में रखा जाता है। रोमन लिपि की उत्कृष्टता सिद्ध की गई है। रोमन में यान्त्रिक सुविधा अवश्य है, क को Ka लिखा जाएगा, अ को अलग दिखाया जा सकता है, परन्तु सांकेतिक निर्देशो के बिना अ–आ, इ–ई आदि स्वरों का भेद नहीं दिखाया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए उसकी उपयोगिता अवश्य है, परन्तु देवनागरी या भारतीय लिपियों से उसे अधिक वैज्ञानिक या उत्कृष्ट कहना केवल प्रलाप है, रोमन में वैज्ञानिकता का नाम भी नहीं है।

- **रेखाक्षरात्मक**–प्रत्येक शब्द के लिए प्रत्येक ध्वनि के सम्मिलन के लिए रेखाचित्रों को निर्धारित करके बनी लिपियाँ रेखाक्षरात्मक लिपियां कहलातीं हैं। चीन तथा जापान की लिपियां रेखाक्षरात्मक हैं। जापान ने वर्णों की संरचना करके अपनी लिपि को अपेक्षाकृत सरल बना लिया है।

11.4 भाषा और लिपि में अन्तर

मानव के संवेदनात्मक भावों को भाषा पूर्णतया अभिव्यक्ति नहीं कर पाती है। हर्ष, शोक, मिठास, कड़वापन आदि भाव भाषा से पूर्णतया व्यक्त नहीं हो पाते हैं। किन्तु लिपि भाषा का स्थूल रूप है। इसलिए यह मनोभावों को व्यक्त करने में असमर्थ है। इसके अतिरिक्त भाषा सूक्ष्म है, लिपि स्थूल है। भाषा की ध्वनियों में अस्थायित्व है, लिपि में अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व है। भाषा में सुर, ताल आदि के द्वारा बहुत कुछ मनोभावों को व्यक्त किया जा सकता है, लिपि में नहीं। भाषा श्रव्य है, लिपि दृश्य एवं पाठ्य। भाषा सद्यः प्रभावकारी है, लिपि विलम्ब से। दोनों में साम्य यह है कि दोनों मानव की भावाभिव्यक्ति के साधन है। दोनों से भावाभिव्यक्ति अपूर्ण होती है। दोनों देश–कालादि भेद से भिन्न हैं। दोनों सांस्कृतिक उन्नति की प्रतीक हैं। दोनो का ज्ञान शिक्षण से प्राप्त होता है।

11.5 भारत में लिपि विज्ञान एवं लेखन कला का साक्ष्य

यह प्रश्न उतना ही विवादास्पद है, जितना कि भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न या आर्यों के मूल निवास स्थान का प्रश्न। कल्पना, अनुमान तथा पूर्वाग्रहों के कारण यह प्रश्न ही उलझ गया है। उदाहरण के लिये, कुछ विद्वान् यदि ग्रीक लिपि से फिनीशी लिपि का उद्‌भव मानते हैं तो कुछ दूसरे, फिनीशी लिपि से ग्रीक लिपि का विकास स्वीकार करते हैं। यह एक उदाहरण ही लिपि सम्बन्धी विभिन्न देशीय विद्वानों की विचारधारा

को समझने के लिये पर्याप्त है। इसी प्रकार अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भारत की प्राचीन ब्राह्मी लिपि को भी विदेशी, विशेषतः सामी लिपि से उद्भूत प्रतिपादित करने का असफल प्रयास किया है।

लिपियों के उद्गम के सम्बन्ध में डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा का मत है कि आज की प्रचलित लिपियों को देखते हुए उनका स्वतंत्र उद्गम मानना अधिक उचित होगा। यदि सभ्यता का विकास स्वतंत्र रूपसे हो सकता है तो लिपि का विकास क्यों नहीं हो सकता? आज संसार में प्रचलित लिपियों को देखते हुए उनके चार स्वतंत्र उद्गम मानना अधिक अच्छा है। वे चार लिपियाँ है–भारतीय, यूरोपीय, सामी, चीनी। इन चारों में इतना स्पष्ट पार्थक्य है कि इन्हें एक स्रोत से सम्बद्ध मानना असंगत है। सम्भव है, किसी लिपि के एक दो संकेत किसी दूसरी लिपि में भी आ गये हों, परन्तु इतने से ही उनमें जन्य–जनक भाव की कल्पना नहीं की जा सकती। ब्राह्मी लिपि से भारत की सभी लिपियाँ निकलीं हैं, यह इतिहास सिद्ध है।

11.5.1 वेदों में लिपि विज्ञान एवं लेखन का साक्ष्य

भारत में प्राचीन समय में लेखनकला प्रचलित थी। ऋग्वेद में 'लिख्' धातु के कई रूपों का प्रयोग है। अथर्ववेद में चार स्थानों पर लिखने की कला का उल्लेख है। इसमें सुलेख, ऋण सम्बन्धी लेख और आकृतिमूलक लेख का उल्लेख है।

- अजैषं त्वा संलिखितम्। (अथर्ववेद 7/50/5) (सुलेख)
- यद्यद् द्युत्तं लिखितमर्पणेन। (अथर्ववेद 12/3/22) (लेन–देन का लेख)
- अप शीर्षण्यं लिखात्। (अथर्ववेद 14/2/68) (ऊपर की रेखाएँ)
- क एषां कर्करी लिखत्। (अथर्ववेद 20/132/8) (चित्रात्मक लेख)

ब्राह्मण ग्रन्थों में लिख् धातु के ये प्रयोग मिलते हैं–लिखति–लिखते, लिलेख, अलीलिखत्, लेखीः, लिखित, लिख्य। इनसे यह स्पष्ट है कि लेखनकला का क्या स्वरूप था ? लिपि क्या थी ? लिख् धातु से इतना स्पष्ट है कि लिखने का काम होता था और किसी नुकीली धातु से अक्षर लिखे या खोदे जाते थे।

ऋग्वेद में अष्टकर्णी हजार गायों के दान देने का उल्लेख है–

सहस्रं मे ददतो अष्टकर्ण्यः। (ऋग्वेद 10/62/7)

इसमें अष्टकर्णी से यह स्पष्ट है कि गायों के कान पर 8 अंक लिखा होता था। यजुर्वेद, तैत्तिरीय संहिता और अथर्ववेद में 1 से 100 तक की गिनती, पहाड़ा, एक से दश शंख तक की संख्याओं के नाम–एक, शत, सहस्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्बुद, न्यर्बुद, समुद्र, मध्य, अन्त, परार्ध दश शंख मिलते हैं। इन संख्याओं का ज्ञान लेखन कला के बिना संभव नहीं है।

अथर्ववेद में अक्षर शब्द का छोटी इकाई के रूप में उल्लेख है। इससे ही विभिन्न छन्दों की मात्राएँ और वर्ण गिने जाते थे–'**अक्षरेण मिमते सप्त वाणीः**'(अथर्ववेद 9/10/2) '**सहस्रत्राक्षर**' (अथर्ववेद 9/10/21) से ज्ञात होता है कि 1 हजार वर्णों वाले मन्त्रादि होते थे। अथर्ववेद 19/21/1 में 7 छन्दों का उल्लेख है। यजुर्वेद में 11, 14 और 22 छन्दों तक का उल्लेख है। साथ ही उनके पादों आदि का भी उल्लेख है। तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक आदि संहिताओं में छन्दों के पाद और अक्षरों की गणना भी दी गई है।

11.5.2 ग्रन्थों में लिपि विज्ञान एवं लेखन का साक्ष्य

1. बौद्ध–ग्रन्थ **'ब्रह्मजाल सुत्त'** (6ठी सदी ई. पू.) में अक्खरिका (अक्षरिका) का उल्लेख है। इसमें बच्चों को पीठ पर लिखे अक्षरों को पहचानना होता था।
2. सुत्तान्त (सूत्रान्त 6ठी सदी ई. पू.) में भिक्षुओं को अक्खरिका खेल न खेलने का आदेश है।
3. विनयपिटक (400 ई. पू. से पूर्व) में लेखन कला की प्रशंसा की गई है।
4. महावग्ग और जातकों में लेखन–कला के अध्यापन और लेखन सामग्री का उल्लेख है।
5. ललितविस्तर में उल्लेख है कि गुरु विश्वामित्र ने गौतम बुद्ध को तख्ती पर स्वर्ण कलम से लिखना सिखाया।
6. जातकों में नियमों को सुवर्णपत्रों पर खुदवाने, सरकारी लेख एवं ऋणपत्रों को लिखवाने का उल्लेख है।
7. रामायण (600 ई. पू.) महाभारत (500 ई. पू.) अर्थशास्त्र (4र्थ सदी ई. पू.) में अनेक स्थलों पर लेखन कला का उल्लेख है। लेख, लेखक, लेखन आदि शब्दों का प्रयोग है।

आचार्य पाणिनी (5वीं सदी ई. पू.) ने स्पष्ट रूप से लिपि, लिबि, लिपिकर, ग्रन्थ, यवनानी (यूनानी लिपि), स्वरित चिह्न आदि का उल्लेख किया है–

दिवाविभा...लिपिलिबि. (अष्टाध्यायी 3/2/21)

पशुओं के कानों पर पहचान के लिए 5, 8 आदि अंक लिखने का उल्लेख पाणिनि ने किया है–(डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल कृत पाणिनिकालीन भारतवर्ष पृ. 306/307)

लिपि को लिबि भी कहते थे। कौटिल्य अर्थशास्त्र (1–5) में लिपि का उल्लेख है। कौटिल्य ने (अथर्ववेद 1/12) सांकेतिक लिपि के लिए संज्ञालिपि नाम दिया है। बौद्ध और जैन ग्रन्थों में अनेक लिपियों का उल्लेख मिलता है। बौद्ध ग्रन्थ ललितविस्तर में 64 लिपियों के नाम हैं। जैन ग्रन्थ पन्नवणा सूत्र तथा समवायांग सूत्र में 18 लिपियों के नाम हैं। इनमें विशेष महत्वपूर्ण लिपियाँ हैं। **1.** बंभी, ब्राह्मी (ब्राह्मी) **2.** खरोट्ठी (खरोष्ठी) **3.** जवणाणिया (यवनानी) **4.** अंकलिवि (अंकलिपि) **5.** गणितलिवि (गणितलिपि) **6.** माहेसरी (माहेश्वरी) **7.** हूण लिपि **8.** चीनलिपि **9.** दरदलिपि **10.** द्राविड़ी लिपि।

11.5.3 विदेशी लेखों में लिपि विज्ञान एवं लेखन का साक्ष्य

1. सिकन्दर के सेनापति निआर्कस (326 ई. पू.) ने भारत का वृतान्त लिखा था। एरिअन ने अपनी पुस्तक इंडिका में इसका सारांश दिया है। इससे भारत में कागज आदि के उपयोग का ज्ञान होता है।
2. मेगस्थनीज (305 ई. पू.) ने अपने ग्रन्थ इण्डिका में भारत में सड़कों पर मील के पत्थर गड़े होने का उल्लेख किया है। जन्मकुण्डली का भी उल्लेख किया है।
3. चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भारत में लिपि ज्ञान की प्राचीनता का उल्लेख किया है।
4. चीनी विश्वकोष **फा युआन चु लिन्**'(668 ई.) में ब्राह्मी का उल्लेख है। इसका आविष्कारक ब्रह्मा को माना है।

11.5.4 अभिलेखों में लिपि विज्ञान एवं लेखन का साक्ष्य

प्राचीन शिलालेखों आदि से भारत में प्राचीन समय से लेखनकला का ज्ञान होता है।

1. ईरानी सम्राट् दारा प्रथम (581–485 ई. पू.) के बहिस्तून (सं. भगस्थान) अभिलेख में उत्कीर्ण लेखन को **दिपि**(लिपि) कहा हैं।

2. मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के अभिलेखों का समय 4 हजार ई. पू. के लगभग माना जाता है।

3. अशोक के शिलालेखों से पूर्व के 2 छोटे अभिलेख मिले हैं–(क) अजमेर जिले के **बड़ली** गाँव से (ख) नेपाल की तराई में **पिपरावा** स्थान से। बड़ली वाला अभिलेख एक स्तम्भ के टुकड़े पर है। इसमें प्रथम पंक्ति में **वीराय भगवते** द्वितीय पंक्ति में **चतुरासिति वस** अर्थात् **वीरस्य भगवतः चतुरशीतिवर्षे** (भगवान् वीर या महावीर के निर्वाण के 84 वें वर्ष में)। इससे इसका समय (527 ई. पू. 84) 443 ई. पू. होगा। पिपरावा वाले लेख का समय श्री गौरी ही रामचन्द्र ओझा ने **प्राचीन लिपिमाला** (पृ. 2–3) में 487 ई. पू. के कुछ बाद का माना है।

इससे स्पष्ट होता है कि ई. पू. 6वीं या 7वीं सदी में भारत में लेखनकला एवं लिपि का विस्तृत प्रचार था। स्थायी लेख के लिए शिला, स्तम्भ, सुवर्ण, रजत–ताम्र आदि के पत्र, पकी मिट्टी के सिक्के आदि प्रयुक्त होते थे। प्रारम्भ में ग्रन्थों आदि के लेखन के लिए पर्ण (ताडपत्र आदि) का प्रयोग होता था। बाद में भूर्ज (भोजपत्र), लकड़ी, वस्त्र, चमड़ा आदि का प्रयोग हुआ। कागज का प्रयोग बहुत बाद में हुआ।

पाश्चात्य विद्वानों ने **श्रुति** (श्रवण परम्परा, वेद) शब्द को लेकर बहुत वितण्डा खड़ा किया है और निर्णय दिया है कि भारत में केवल मौखिक परम्परा श्रवण–श्रावण (श्रुति) की थी। वे लेखनकला से अनभिज्ञ थे। यह बात सर्वथा असंगत है। आज भी वेद आदि के लिए श्रवण परम्परा को ही महत्व दिया जाता है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि आज भी लिपि, लेखन, कागज आदि नहीं है। यह केवल प्राथमिकता की बात थी। गुरु शिष्य परम्परा से श्रवण पठन अधिक प्रामाणिक होता था। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सिन्धुघाटी लिपि लगभग 4 हजार वर्ष ई. पू. से तथा अन्य लिपियाँ 7वीं या 6वीं सदी ई. पू. से पहले से ही प्रचलित थी।

बोध प्रश्न–1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइये।**

   I. लिपि विकास के कितने चरण प्राप्त होते हैं। (03/02)

   II. भारतीयों ने ब्राह्मी लिपि का जन्मदाता किसको माना है। (ब्रह्मा/ऋषभदेव)

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।**

   I. ध्वनि लिपि के..............भेद हैं। (03/02)

   II. लेखन की छोटी इकाई अक्षर शब्द का उल्लेख........प्राप्त होता है। (ऋग्वेद में/अथर्ववेद में)

बोध प्रश्न–2

1. भावलिपि को स्पष्ट कीजिए।

....

2. ध्वनिलिपि एवं उसके भेदों को स्पष्ट कीजिए।

....

....

अभ्यास प्रश्न 1

लिपि के उद्‌भव एवं विकास को स्पष्ट कीजिए?

11.6 सारांश

विचारों की मौखिक अभिव्यक्ति के लिये ध्वनि सबसे अनिवार्य तत्व है। अतः यह भाषा की रीढ़ है। मानव को विभिन्न जानकारियों को लम्बें समय तक स्थायी रखने की आवश्यकता महसूस हुई जिससे लिपि का विकास हुआ। इस हेतु उसने मुख से निकलने वाली ध्वनियों के संकेतों अर्थात् चिन्हों को बनाना सीखा। इस प्रकार ध्वनियों के लिये बनाये गये संकेत समानता के आधार पर धीरे–धीरे लिपि का रूप धारण किये। इस प्रकार **इकाई–11** में **लिपि की परिभाषा, उद्‌भव एवं विकास** के अर्न्तगत लिपि के उद्‌भव एवं विकास, लिपि के विकास चरणों चित्रलिपि, भावलिपि एवं ध्वनिलिपि और ध्वनिलिपि के अर्न्तगत अक्षरात्मक, वर्णात्मक एवं रेखाक्षरात्मक तथा भारत में लिपि विज्ञान एवं लेखन कला के बारें अध्ययन किया गया।

11.7 शब्दावली

श्रवण	–	सुनने योग्य
परम्परा	–	रीति
अनभिज्ञ	–	अपरिचित
शिला	–	पत्थर
स्तम्भ	–	खम्भा

11.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- अभिलेखमंजूषा, रणजीत सिंह सैनी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन दिल्ली–2000
- उत्कीर्णलेखपंचकम्, झा बन्धु, वाराणसी, 1968
- उत्कीर्णलेखस्तबकम्, जियालाल कम्बोज, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
- भारतीय अभिलेख, एस.एस.राणा, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, 1978
- भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गौरीशंकर, हीराचन्द ओझा, अजमेर, 1918
- प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र और अभिलेखिकी, नारायण, अवध किशोर एवं ठाकुरप्रसाद वर्मा, वाराणसी 1970
- भारतीय पुरालिपि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, राजबली पाण्डेय, 1978
- भारतीय पुरालिपि शास्त्र, ब्यूलर जार्ज, (हिन्दी अनु.) मंगलनाथ सिंह, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली 1966
- अक्षरकथा, मुले गुणाकर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली 2003

- लेखनकथा का इतिहास (खण्ड 1–2), ईश्वरचन्द्र राही, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उ.प्र. 1983
- भारतीय पुरालिपि विद्या, डी.सी सरकार, (हिन्दी अनु.) कृष्णदत्त वाजपेयी, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1996
- भारतीय पुरालेखों का अध्ययन, शिवस्वरूप सहाय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
- Selected Inscriptions (Vol.1) D.C.Sarkar, Calcutta, 1965
- Indian Chronlogy (Solar, Lunar and Planetary), Pillai, Swami Kannu & K.S. Ramchadran Asian Education Service 2003
- Text Book of Indian Epigraphy, K. Satymurty, Lower Price Publication, Delhi 1992

11.9 बोध प्रश्न/उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) 03 (ii) ब्रह्मा
2. (i) 03(ii) ऋग्वेद में

बोध प्रश्न–2

1. **भावलिपि**–लिपि विकास का द्वितीय चरण था। चित्रलिपि अधिक श्रम साध्य थी, अतः लघुतर उपाय सोचने की प्रक्रिया भी जारी रही। फलस्वरूप भावलिपि का प्रादुर्भाव हुआ। चित्रलिपि और भावलिपि में अन्तर यह है कि चित्रलिपि में केवल वस्तु का चित्र बनाया जाता था। भावलिपि में चित्रों को सरल बनाया गया और साथ ही उनसे संबद्ध अर्थ भी लिए गए। जैसे–सूर्य के लिए एक गोला बनाना, उससे गर्मी, धूप, प्रकाश, दिन आदि का अर्थ बताना। रोने के लिए आँख का चित्र बनाकर उससे आँसू टपकती बूँदे दिखाना। इस प्रकार की लिपि के उदाहरण उत्तरी अमेरिका, चीन, अफ्रीका आदि में मिलते हैं। चीनी लिपि में आज भी अनेक ऐसे शब्द हैं, जो भावलिपि मूलक हैं। जैसे मनुष्य के लिए जेन में ऊपर खड़ी लकीर, नीचे दो तिरछी लकीरें। ऊपर धड़ हो गया, नीचे दो पैर।

   यह चित्र लिपि का विकसित रूप है। चित्र बनाने की क्लिष्टता कुछ कम हुई। एक चित्र से अनेक अर्थ प्रकट होने लगे। यह चित्राभास लिपि हुई। इसमें भी पूर्ववत् दोष विद्यमान रहे। सूक्ष्म भावों को व्यक्त नहीं किया जा सकता था। किस चित्र से क्या भाव लिए जाएँगे, इसमें समरूपता नहीं थी।

   वर्तमान काल में उपलब्ध सिन्धु घाटी की लिपि भावात्मक लिपि का एक उदाहरण है। इससे भारतीय अक्षरात्मक लिपि की उत्पत्ति की संभावना व्यक्त की जाती है। सिन्धु घाटी की भाषा के ज्ञात न होने तथा भाषा के साथ पूर्वाग्रह होने के कारण इसकी लिपि को विभिन्न दावों के बावजूद जाना नहीं जा सका है।

2. **ध्वनिलिपि**–यह लिपि विकास का तृतीय चरण था। यह मानव की लिपि सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि थी। इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए कुछ संकेत निर्धारित किए गए। इनसे मुखोच्चरित प्रत्येक ध्वनि को लिपि बद्ध किया जा सकता था। देश–काल के भेद से ये ध्वनिलिपियाँ अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग विकसित हुईं। इस प्रकार की लिपियाँ हैं–देवनागरी, रोमन, अरबी आदि।

समय तथा स्थान के भेद से कुछ विद्वानों ने ध्वनिलिपि के तीन भेद किए हैं–1. अक्षरात्मक 2. वर्णात्मक 3. रेखात्मक।

- **अक्षरात्मक**–अक्षरात्मक में चिन्ह किसी अक्षर को व्यक्त करते हैं। इसमें देवनागरी को अक्षरात्मक में रखा जाता है। देवनागरी पूर्णतया वर्णात्मक लिपि है। प्रत्येक वर्ण के लिए स्वतन्त्र क् आदि चिन्ह हैं। केवल लेखन की सुविधा के लिए वर्णमाला में व्यंजनों को हलन्त (क्, ख्, ग्) न लिखकर अकारान्त (क, ख, ग आदि) लिखा जाता है।

- **वर्णात्मक**–वर्णात्मक में चिन्ह वर्ण को व्यक्त करता है। रोमन को वर्णात्मक में रखा जाता है। रोमन लिपि की उत्कृष्टता सिद्ध की गई है। रोमन में यान्त्रिक सुविधा अवश्य है, क को Ka लिखा जाएगा, अ को अलग दिखाया जा सकता है, परन्तु सांकेतिक निर्देशों के बिना अ–आ, इ–ई आदि स्वरों का भेद नहीं दिखाया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए उसकी उपयोगिता अवश्य है, परन्तु देवनागरी या भारतीय लिपियों से उसे अधिक वैज्ञानिक या उत्कृष्ट कहना केवल प्रलाप है, रोमन में वैज्ञानिकता का नाम भी नहीं है।

- **रेखाक्षरात्मक**–प्रत्येक शब्द के लिए प्रत्येक ध्वनि के सम्मिलन के लिए रेखाचित्रों को निर्धारित करके बनी लिपियाँ रेखाक्षरात्मक लिपियां कहलातीं हैं। चीन तथा जापान की लिपियां रेखाक्षरात्मक हैं। जापान ने वर्णों की संरचना करके अपनी लिपि को अपेक्षाकृत सरल बना लिया है।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 12 भारत की प्रमुख लिपियाँ और उनकी विशेषताएँ

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- भारत की प्रमुख लिपियाँ ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं सिन्धु लिपि के बारें में जान सकेंगे।
- इन प्रमुख लिपियों की वर्णमाला एवं विशेषताओं के बारें में जान सकेंगे।
- प्रयुक्त तकनीकी शब्दावली के बारें में जान सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

भाषाओं को लिखने के लिए लिपियों का प्रयोग किया जाता है। भारत देश की प्रमुख लिपियों में ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं अपठित सिन्धु लिपि को रखा जा सकता है। इनके अतिरिक्त नेवारी, ग्रंथी, शारदा, कन्नड़, तेलुग, मलायलम, तमिल गुरुमुखी, बंगाली, आसामी, उड़िया आदि लिपियां भी क्षेत्र विशेष में प्रचलित हैं। किन्तु

इनमें से अधिकाशं भाषा की दृष्टि से संस्कृत तथा लिपि की दृष्टि से देवनागरी से प्रभावित है। इस प्रकार **इकाई–12 भारत की प्रमुख लिपियाँ और उनकी विशेषताएँ** के अन्तर्गत भारत की प्रमुख लिपियाँ ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं सिन्धु लिपि के बारे में अध्ययन किया जायेगा।

12.2 भारत की प्रमुख लिपियाँ

भारत एक ऐसा देश है जिसमें अनेकों भाषाएं बोली जातीं हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी लिपि होती है। भारत देश की प्रमुख लिपियों में हम ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं सिन्धु लिपि को रख सकते हैं। इनके अतिरिक्त यद्यपि भारत में नेवारी, ग्रंथी, शारदा, कन्नड़, तेलुग, मलायलम, तमिल, गुरुमुखी, बंगाली, आसामी, उड़िया आदि लिपियां भी क्षेत्र विशेष में प्रचलित हैं। तथापि इनमें से अधिकांश लिपियां भाषा की दृष्टि से संस्कृत तथा लिपि की दृष्टि से देवनागरी से प्रभावित है। **ब्राह्मी लिपि** – सबसे प्राचीन मानी जाती है। हमें अनेकों शिलालेखों में इसके साक्षय प्राप्त हुए हैं। यह बाँए से दाँए लिखी जाती है। **खरोष्ठी लिपि** – गधे के ओष्ट की तरह टेढ़ी–मेढ़ी होती है। इसलिए इसे खरोष्ठी कहा गया। यह लिपि फारसी की तरह दाँए से बाँए लिखी जाती है। **देवनागरी लिपि** – वर्तमान में हम प्रयोग कर रहे हैं। जिसमें संस्कृत, हिंदी, गुजराती एवं मराठी आदि भाषाओं को लिखा जाता है। **शारदा लिपि** – कश्मीरी भाषाओं को लिखने के लिए शारदा लिपि को प्रयोग किया गया है यह देवनागरी लिपि से मिलती जुलती है।

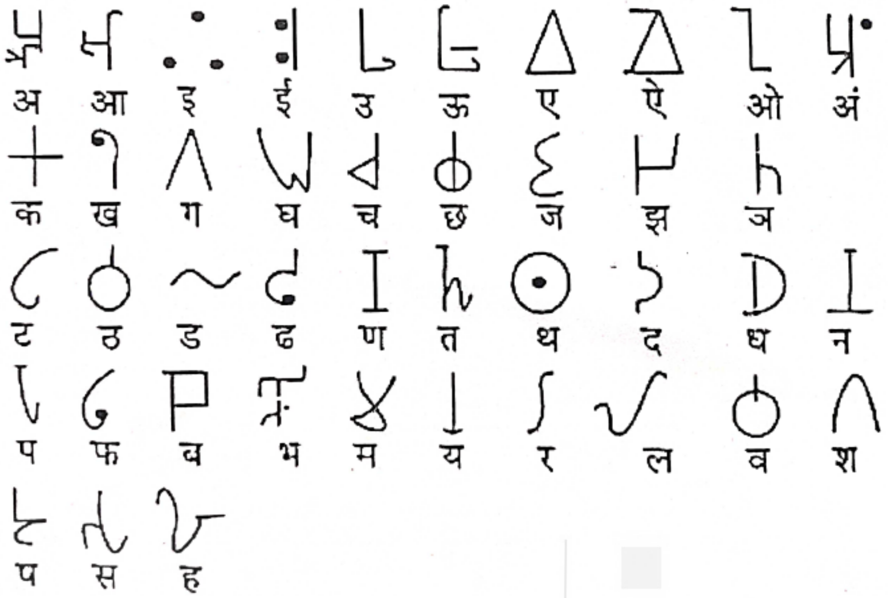
12.2.1 ब्राह्मी लिपि

प्राचीन काल में संस्कृत भाषा ब्राह्मी लिपि में लिखी जाती थी । यह हमें अशोक के शिलालेखों तथा गुहालेखों में इसके उत्कीर्ण होने से पता चलता है । अशोक के शिलालेखों एवं जोगीमारा की गुहा में जो लिपि प्राप्त हुई है उसे ही ब्राह्मी लिपि कहा जाता है। यह लिपि समस्त उतरवर्ती लिपियों की जननी भी कही जाती है । सर्वप्रथम इस लिपि का परिचय विद्वानों को एलोरा तथा जोगीमारा की गुफाओं में उत्कीर्ण लिपि लेखों के आधार पर 1795 ईस्वी में हुआ किंतु प्रारंभ में शोधकर्ताओं को ग्रीक तथा रोमन अक्षरों के साथ आंशिक समानता दिखाई दी । अतः इसके पृथक् अस्तित्व को लेकर भाषाविदों को संदेह बना रहा । 1795 में सर चार्ल्स मैलेट ने एलोरा गुफाओं के इन ब्राह्मी लिपिलेखों को पढवाने का प्रयत्न कराया किंतु सफलता प्राप्त नहीं हुई । इसके 38 साल बाद 1833 ईस्वी में सर्वप्रथम ब्राह्मी लिपि को पढाने का श्रेय जेम्स प्रसेंप को जाता है । इसके अनंतर ही विद्वानों को इस लिपि के यथार्थ स्वरूप का बोध हो सका । ब्राह्मी लिपि को दाँए से बाँए लिखा जाता है किंतु अपवाद स्वरूप अशोक के येरगुड़ी (मद्रास) के लिपिलेख के आधार पर व्यूह्लर महोदय ने इसके दाएं से बाएं लिखे जाने का मत प्रदर्शित किया है । ऐसे ही कनिंघम ने जबलपुर से प्राप्त एक सिक्के में इसके दाँए से बाँए लिखे जाने का प्रमाण प्रस्तुत किया है । किंतु अपवादों के आधार पर सिद्धांतों की स्थापना नहीं होती अतः बहुत आयात में प्राप्त अभिलेख और शिलालेखों पर यह लिपि बाँए से दाँए ही लिखी प्राप्त होती है । जैसा कि जोगीमारा की गुफाओं में उत्कीर्ण यह श्लोक दाँए से बाँए लिखा हुआ प्राप्त होता है :–

आदिपयन्ति ह्रदयं सभावगरुका कवयो एतितियं ।

दुले वसन्तिया हि सावानुभूए कुन्दस्ततं एवमालंगति ।।

12.2.1.1 ब्राह्मी लिपि की वर्णमाला



12.2.1.2 ब्राह्मी लिपि की विशेषताएं

- ब्राह्मी लिपि भारतवर्ष की सबसे प्राचीन लिपि है ।
- भारतीय उपखंड की अधिकांश लिपियां इसी से उत्पन्न हुई हैं ।
- जिस प्रकार संस्कृत भाषा सभी भाषाओं की जननी है, उसी प्रकार ब्राह्मी लिपि भी सभी लिपियों की जननी कही जाती है ।
- ब्राह्मी लिपि में शिरोरेखा नहीं होती जैसे देवनागरी एवं शारदा आदि लिपियों में होती है ।
- इसमें विसर्ग अनुस्वार एवं अनुनासिक हेतु स्वतंत्र चिह्नों का प्रयोग प्राप्त होता है। जो की आधुनिक लिपियों में भी मिलता है।
- वर्णों का ध्वन्यात्मक विभाजन उनके उच्चारण स्थान के आधार पर हुआ है ।
- इस लिपि का प्रत्येक वर्ण अपनी उच्चारण ध्वनि को प्रकट करता है, जिससे यह समझने में सरल एवं वैज्ञानिक प्रतीत होती है ।
- इसके अक्षरों का आकार समान है । शलाका से अंकित होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं ।
- संपूर्ण अक्षरों की बनावट आतीव सरल है जो की सरल ज्यामितिक चिह्नों के आधार बने हुए हैं ।
- इसमें मात्राओं के लिए अलग–अलग चिह्नों का प्रयोग किया गया है जो की वर्णों के ऊपर अथवा नीचे दाएं या बाएं लगाए गए हैं ।
- इसमें दीर्घ मात्राओं का प्रयोग बहुत कम हुआ है ।
- संयुक्त अक्षरों का प्रयोग भी अत्यल्प मात्रा में हुआ है ।

- संयुक्त अक्षर को लिखते समय जो अक्षर पहले बोला जाता है उसे ऊपर और जो बाद में बोला जाता है उसे नीचे लिखा जाता है । इस प्रकार संयुक्त अक्षर एक दूसरे के नीचे लिखे जाते हैं ।
- इस लिपि में समस्त अक्षरों हेतु स्वतंत्र तथा असंदिग्ध चिन्ह विद्यमान हैं । इसलिए यह पूर्णतः वैज्ञानिक कहलाती है ।

12.2.2 खरोष्ठी लिपि

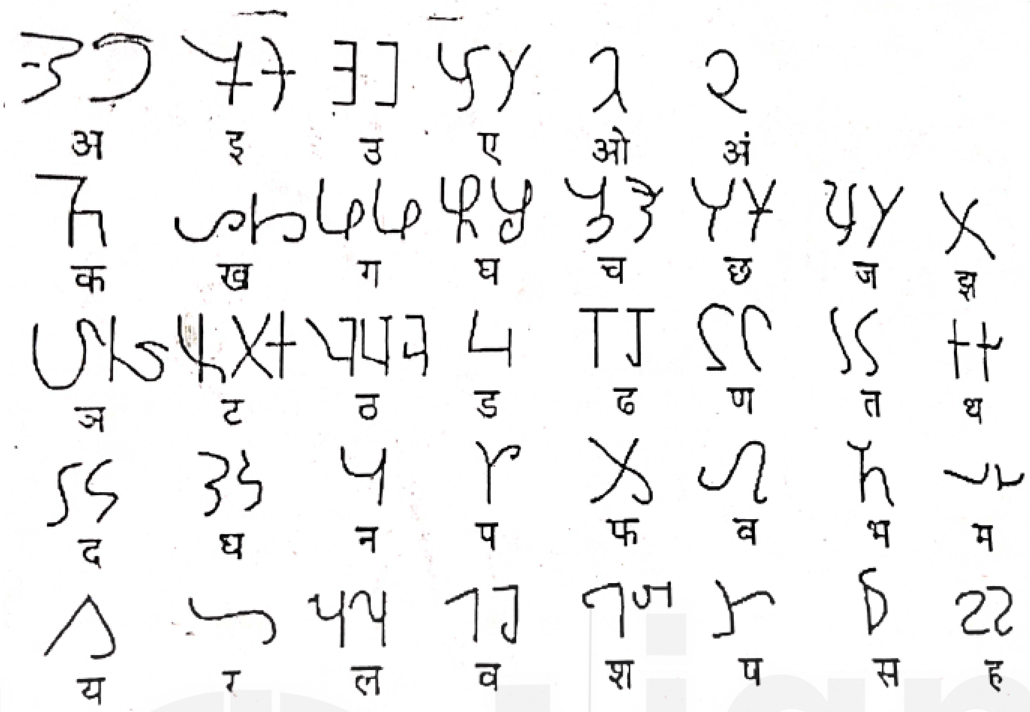
खर (गधा) ओष्ठ (होंठ) कतिपय विद्वानों का मानना है की गधे के होंठ के समान टेढ़ी–मेढ़ी होने के कारण ही इस लिपि को खरोष्ठी लिपि कहा गया । इस लिपि का प्रचलन हमें ई.पू. तीसरी –चौथी सती में भारत के पश्चिमोत्तर भाग अफगानिस्तान में प्राप्त होता है । सम्राट अशोक ने इस लिपि का प्रयोग सहबाजगढ तथा मनसेहरा अभिलेखों में किया है । इसके अतिरिक्त शक् क्षत्रपों तथा कुशाणवंशीय राजाओं की मुद्राओं में भी इस लिपि में लेख प्राप्त हुए हैं । पार्थियन बैक्ट्रीयन ग्रीक राजाओं की मुद्राओं तथा अनेक बौद्ध लेखों में भी खरोष्ठी का प्रयोग प्राप्त हुआ है ।

खरोष्ठी लिपि को पहचानने के लिए प्रयत्न करने वाले विद्वान – सर्वप्रथम करनाल टॉड ने पार्थियन ,ग्रीक , बैक्ट्रीयन ,शक एवं कुशाण शासकों की मुद्राओं का संग्रह किया। जिनमें पाया कि एक तरफ ग्रीक अक्षर तथा दूसरी ओर खरोष्ठी लिपि अंकित थी। ग्रीक वर्णों की पहचान तो सरलता से हो गई किंतु खरोष्ठी लिपि के बारे में संदेह बना रहा। 1824 ईस्वी में कर्नल टॉड ने सम्राट कैडफिशस् के सिक्कों पर उत्कीर्ण खरोष्ठी अक्षरों को सेसेनियन् अक्षर कहा तथा 1833 में प्रिंसेप महोदय ने सम्राट अपोलोडोटस् के सिक्कों पर उत्कीर्ण खरोष्ठी अक्षरों को 'पहलवी' अक्षर बतलाया।

जनरल वेंटुरां महोदय ने 1830 में मानिआल स्तूप का उत्खनन कराया तो उसमें खरोष्ठी लिपि से अंकित प्रभूत मात्रा में सिक्के एवं दो लेख प्राप्त हुए। अलेक्जेंडर कनिंघम तथा बंन्स आदि विद्वानों को भी ऐसे अनेक सिक्के मिले जिनमें एक तरफ तो सुपाठ्य ग्रीक अक्षर थे परंतु दूसरी ओर एक अपरिचित लिपि थी ।

- इस प्रकार लंबे समय तक खरोष्ठी की पहचान को लेकर विद्वानों में सन्देह का वातावरण बना रहा तथा इसकी पहचान को लेकर भी प्रयत्न चलता रहा 1838 ईस्वी में प्रिंसेप ,कनिंघम एवं नाटिस् के सामूहिक प्रयत्न से खरोष्ठी के समस्त वर्णों की पहचान की तथा निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किए गए :–
- खरोष्ठी लिपि फारसी की तरह दाएं से बाएं लिखी जाती है यह लिपि आर्येतर परिवार की है।
- यह सेमेटिक परिवार से संबद्ध आर्मेइक लिपि की उपज है ।
- भारत में प्राप्त खरोष्ठी के लिपि लेखो में प्रयोग की गई भाषा प्राकृत है पहलवी नहीं। इसमें लिखे लेख पाली भाषा में हैं।

12.2.2.1 खरोष्ठी लिपि की वर्णमाला



12.2.2.2 खरोष्ठी लिपि की विशेषताएं

- इस लिपि में दीर्घ स्वरों का प्रयोग नहीं किया गया है।
- यह दाएं से बाएं लिखी जाती है।
- द्वित्व किए हुए अल्पप्राण व्यंजन के स्थान पर अकेले व्यंजन का प्रयोग होता है जैसे 'क्क' के स्थान पर ' क'।
- अल्प प्राण और महाप्राण व्यंजनों के संयोग वर्णों के स्थान पर आगे आने वाले वर्ण का प्रयोग होता है जैसे ' क्ख' के स्थान पर 'ख'।
- इसमें 38 वर्ण हैं।
- इस लिपि में 6 स्वर हैं।

12.2.3 देवनागरी लिपि

भारत के अधिकांश प्रान्तों में बोले जाने वाली भाषाओं की लिपि देवनागरी है । इस लिपि का प्रभूत साहित्य संस्कृत भाषा में निबंध है । संस्कृत को देव भाषा भी कहा जाता है अतः इस लिपि को देवनागरी कहा गया है।

12.2.3.1 देवनागरी लिपि की वर्णमाला

देवनागरी लिपि की वर्णमाला में मुख्य रूप से निम्नलिखित 52 वर्ण प्रचलित हैं :–

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः ऋ ॠ ऌ ॡ स्वर ।

क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण (ड़, ढ़), त थ द ध न, प फ ब भ म, स्पर्श ।

य र ल व, अंतस्थ ।

श ष स ह , ऊष्म ।

क्ष त्र ज्ञ, संयुक्ताक्षर ।

12.2.3.2 देवनागरी लिपि की विशेषताएं

- यह दाएं से बाएं लिखी जाती है। यह जैसी लिखी जाती है वैसी ही पढ़ी जाती है।
- इसके वर्णों का निश्चित उच्चारण स्थान और प्रयत्न है।
- पहले स्वर आते हैं बाद में व्यंजन वर्ण ।
- व्यंजनों में भी पहले अल्पप्राण तथा बाद में महाप्राण वर्ण आते हैं
- अनुस्वार को वर्ण के ऊपर लगाया जाता है।
- इस लिपि में सर्वाधिक साहित्य प्राप्त होता है
- इस लिपि में किसी भी भाषा को शुद्ध लिखा जा सकता है ।
- इस लिपि में गुजराती, मराठी, हिंदी, संस्कृत आदि भाषाएं लिखी जातीं हैं।
- इसमें तीन संयुक्ताक्षर है – क्ष त्र ज्ञ।
- क्ष संयुक्ताक्षर का क्+ष्+अ = क्ष के मिलने से बना है।
- त्र संयुक्ताक्षर का त्+र्+अ = त्र के मिलने से बना है।
- ज्ञ संयुक्ताक्षर का ज्+ञ्+अ = ज्ञ के मिलने से बना है। न कि ग्+य्+अ के संयोग से।

12.2.4 शारदा लिपि

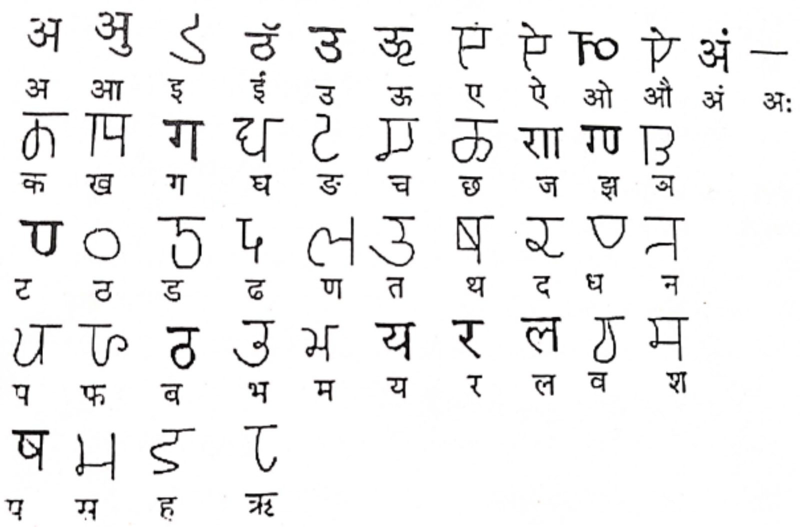
शारदा लिपि का प्रयोग क्षेत्र कश्मीर रहा है । कतिपय लिपियों का नामकरण उनके प्रयोगक्षेत्र अथवा उद्भवक्षेत्र के आधार पर देखा जाता है । जैसे नेवार (नेपाल) देश विशेष की लिपि को नेवारीलिपि कहते हैं । सिंधु क्षेत्र की लिपि को सिंधुलिपि कहते हैं । पल्लव क्षेत्र की लिपि को पल्लवी कहते हैं। वैसे ही शारदा लिपि का नामकरण उसके उद्भव क्षेत्र के आधार पर रखा गया है क्योंकि प्राचीन ग्रंथो में कश्मीर को शारदा देश कहा गया है। अतः शारदा देश में होने वाली लिपि को शारदा लिपि कहते हैं । कश्मीर देश के निवासी महाकवि बिल्हण ने एक महाकाव्य लिखा जिसका नाम है विक्रमांकदेवचरितम् उसके प्रथम सर्ग में इन्होंने इस तथ्य का उद्घाटन किया है :–

सहोदराः कुङ्कुमकेसराणां भवन्ति नूनं कविताविलासाः।

न शारदादेशमपास्य दृष्टस्तेषां यदन्यत्र मया प्ररोहः।।

विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती हैं जिन्हें शारदा भी कहा जाता है कश्मीर देश में शारदापीठम् था जो वर्तमान के पाक अधिकृत कश्मीर के मुजफ्फराबाद में जीर्ण शीर्ण अवस्था में विद्यमान है । शारदापीठ की ख्याति विद्या और वैदुष्य की परीक्षा के लिए दूर–दूर तक फैली हुई थी।

12.2.4.1 शारदा लिपि की वर्णमाला



12.2.4.2 शारदा लिपि की विशेषताएं

- इसमें 12 स्वर और 33 व्यंजन हैं ।
- जम्मू कश्मीर के अधिकांश प्राचीन पांडुलिपियों शारदा लिपि में ही लिखी प्राप्त होती हैं।
- इस लिपि का नामकरण इसके उद्धव क्षेत्र के आधार पर शारदा लिपि रखा गया।
- यह कश्मीरी भाषाओं की मूल लिपि है।
- यह लिपि देवनागरी लिपि से मिलती–जुलती है।
- यह बाएं से दाएं लिखी जाती है।
- इस लिपि का प्रयोग संस्कृत भाषा को लिखने के लिए भी किया गया।
- इस लिपि में वर्ण के ऊपर शिरोरेखा होती है।
- यह लिपि कश्मीर तथा पंजाब के कार्यालयों में प्रयुक्त होती रही है।
- इस लिपि में संस्कृत, पाली, प्राकृत अपभ्रंश आदि भाषाओं को भी शुद्ध लिखा जा सकता है।
- यह लिपि लेखन और वाचन की दृष्टि से सरल एवं सुगम है।
- इस लिपि का प्रत्येक वर्ण स्वतंत्र रूप से एक ही ध्वनि का उच्चारण करता है।
- इसमें अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग के लिए स्वतंत्र लिपि चिन्ह विद्यमान है।
- इसमें संयुक्ताक्षरों को ऊपर नीचे लिखने का विधान है। जिस अक्षर को आधा लिखना होता है वह ऊपर तथा दूसरे अक्षर को उसके नीचे लिखा जाता है।

इन चार प्रमुख लिपियों के अतिरिक्त भारत देश में नेवारी ग्रंथि, शारदा ,कन्नड़ ,तेलुगू ,मलयालम, तमिल, गुरुमुखी बंगाली, आसामी उड़िया आदि लिपियों का भी क्षेत्र विशेष में प्रचलन है । इनमें से अधिकांश लिपियां भाषा की दृष्टि से संस्कृत तथा लिपि की दृष्टि से देवनागरी से प्रभावित हैं ।

12.2.5 सिंधुलिपि

सिंधु घाटी के क्षेत्र में जो लिपि प्राप्त हुई उसे सिंधुलिपि के नाम से जाना जाता है। यह लिपि चित्रात्मक है। चित्रात्मक होने के कारण आज तक देसी अथवा विदेशी विद्वान इसको पढ़ने में समर्थ नहीं हो सके हैं । इस लिपि में लगभग 400 से अधिक चित्रों का प्रयोग किया गया है । इसमें प्रयुक्त चित्र मछली, हिरण, वृक्ष तथा चिड़िया आदि के हैं । विदेशी विद्वान मैरिंगी ने इसे भाव लिपि माना है।

बोध प्रश्न–1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइये।**

   I. ब्राह्मी लिपि को किस तरफ से लिखा जाता है। (बाँए से दाँए/दाँए से बाँए)

   II. खरोष्ठी लिपि को किस तरफ से लिखा जाता है। (बाँए से दाँए/दाँए से बाँएँ)

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।**

   I. खरोष्ठी लिपि ....प्राप्त हुई। (अफगानिस्तान/पाकिस्तान)

   II. सिन्धुघाटी के लिपि को भाव चिन्हों से निर्मित...........विद्वान ने माना है। (मैरिंगी/हंटर)

बोध प्रश्न–2

1. ब्राह्मी लिपि को स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

2. खरोष्ठी लिपि को स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 1

शारदा लिपि को स्पष्ट कीजिए।

12.3 सारांश

भाषाओं को लिखने के लिए लिपियों का प्रयोग किया जाता है। इस इकाई में भारत देश की प्रमुख लिपियों में लिपियाँ ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं अपठित सिन्धु लिपि को रखा गया है। इनके अतिरिक्त नेवारी, ग्रंथी, शारदा, कन्नड़, तेलुग, मलायलम, तमिल गुरुमुखी, बंगाली, आसामी, उड़िया आदि लिपियां भी क्षेत्र विशेष में प्रचलित हैं। किन्तु इनमें से अधिकाशं भाषा की दृष्टि से संस्कृत तथा लिपि की दृष्टि से देवनागरी से प्रभावित हैं। इस प्रकार **इकाई–12 भारत की प्रमुख लिपियाँ और उनके विशेषताएँ** के अन्तर्गत भारत की प्रमुख लिपियाँ ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, शारदा एवं सिन्धु लिपि के बारे में अध्ययन किया गया।

12.4 शब्दावली

संयोग वर्ण – दो व्यंजन वर्णों के बीच में स्वर का ना होना। जैसे क्क ।

द्वित्व वर्ण – एक ही वर्ण की दो बार आवृत्ति होना। जैसे क्क।

12.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गौरीशंकर, हीराचन्द ओझा, अजमेर, 1918
- प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र और अभिलेखिकी, नारायण, अवध किशोर एवं ठाकुरप्रसाद वर्मा, वाराणसी 1970
- भारतीय पुरालिपि मंजूषा, लेखक डॉ0 उत्तम सिंह, प्रकाशक आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर, गांधीनगर
- भारतीय पुरालिपि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, राजबली पाण्डेय, 1978
- शोधप्रविधि एवं पाण्डुलिपिविज्ञान, प्रो0 डॉ0 अभिराजराजेन्द्र मिश्र, प्रकाशित अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद 2008

12.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (प) बाँए से दाँए/पप) दाँए से बाँए
2. (प) अफगानिस्तान (पप) मैरिंगी

बोध प्रश्न–2

प्राचीन काल में संस्कृत भाषा ब्राह्मी लिपि में लिखी जाती थी । यह हमें अशोक के शिलालेखों तथा गुहालेखों में इसके उत्कीर्ण होने से पता चलता है । अशोक के शिलालेखों एवं जोगीमारा की गुहा में जो लिपि प्राप्त हुई है उसे ही ब्राह्मी लिपि कहा जाता है । यह लिपि समस्त उतरवर्ती लिपियों की जननी भी कही जाती है । सर्वप्रथम इस लिपि का परिचय विद्वानों को एलोरा तथा जोगीमारा की गुफाओं में उत्कीर्ण लिपि लेखों के आधार पर 1795 ईस्वी में हुआ किंतु प्रारंभ में शोधकर्ताओं को ग्रीक तथा रोमन अक्षरों के साथ आंशिक समानता दिखाई दी । अतः इसके पृथक् अस्तित्व को लेकर भाषाविदों को संदेह बना रहा । 1795 में सर चार्ल्स मैलेट ने एलोरा गुफाओं के इन ब्राह्मी लिपिलेखों को पढवाने का प्रयत्न कराया किंतु सफलता प्राप्त नहीं हुई । इसके 38 साल बाद 1833 ईस्वी में सर्वप्रथम ब्राह्मी लिपि को पढाने का श्रेय जेम्स प्रसेंप को जाता है ।इसके अनंतर ही विद्वानों को इस लिपि के यथार्थ स्वरूप का बोध हो सका । ब्राह्मी लिपि को दाएँ से बाएँ लिखा जाता है किंतु अपवाद स्वरूप अशोक के येरगुड़ी (मद्रास) के लिपिलेख के आधार पर व्यूह्लर महोदय ने इसके दाएं से बाएं लिखे जाने का मत प्रदर्शित किया है । ऐसे ही कनिंघम ने जबलपुर से प्राप्त एक सिक्के में इसके दाँए से बाँए लिखे जाने का प्रमाण प्रस्तुत किया है । किंतु अपवादों के आधार पर सिद्धांतों की स्थापना नहीं होती अतः बहुत आयात में प्राप्त अभिलेख और शिलालेखों पर यह लिपि बाँय से दाँए ही लिखी प्राप्त होती है । जैसा कि जोगीमारा की गुफाओं में उत्कीर्ण यह श्लोक दाँए से बाँए लिखा हुआ प्राप्त होता है :–

> आदिपयन्ति हृदयं सभावगरुका कवयो एतितियं ।
> दुले वसन्तिया हि सावानुभूए कुन्दस्ततं एवमालंगति ।।

ब्राह्मी लिपि की विशेषताएं :–

- ब्राह्मी लिपि भारतवर्ष की सबसे प्राचीन लिपि है ।
- भारतीय उपखंड की अधिकांश लिपियां इसी से उत्पन्न हुईं हैं ।
- जिस प्रकार संस्कृत भाषा सभी भाषाओं की जननी है, उसी प्रकार ब्राह्मी लिपि भी सभी लिपियों की जननी कही जाती है ।
- ब्राह्मी लिपि में शिरोरेखा नहीं होती जैसे देवनागरी एवं शारदा आदि लिपियों में होती है ।
- इसमें विसर्ग अनुस्वार एवं अनुनासिक हेतु स्वतंत्र चिह्नों का प्रयोग प्राप्त होता है। जो की आधुनिक लिपियों में भी मिलता है।
- वर्णों का ध्वन्यात्मक विभाजन उनके उच्चारण स्थान के आधार पर हुआ है ।
- इस लिपि का प्रत्येक वर्ण अपनी उच्चारण ध्वनि को प्रकट करता है जिससे यह समझने में सरल एवं वैज्ञानिक प्रतीत होती है ।
- इसके अक्षरों का आकार समान है । शलाका से अंकित होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं ।
- संपूर्ण अक्षरों की बनावट आतीव सरल है जो की सरल ज्यामितिक चिह्नों के आधार बने हुए हैं ।
- इसमें मात्राओं के लिए अलग–अलग चिह्नों का प्रयोग किया गया है जो की वर्णों के ऊपर अथवा नीचे दाएं या बाएं लगाए गए हैं ।
- इसमें दीर्घ मात्राओं का प्रयोग बहुत कम हुआ है ।
- संयुक्त अक्षरों का प्रयोग भी अत्यल्प मात्रा में हुआ है ।
- संयुक्त अक्षर को लिखते समय जो अक्षर पहले बोला जाता है उसे ऊपर और जो बाद में बोला जाता है उसे नीचे लिखा जाता है । इस प्रकार संयुक्त अक्षर एक दूसरे के नीचे लिखे जाते हैं ।
- इस लिपि में समस्त अक्षरों हेतु स्वतंत्र तथा असंदिग्ध चिन्ह विद्यमान हैं । इसलिए यह पूर्णतः वैज्ञानिक कहलाती है ।

खरोष्ठी लिपि :– खर (गधा) ओष्ठ (होंठ) कतिपय विद्वानों का मानना है की गधे के होंठ के समान टेढ़ी–मेढ़ी होने के कारण ही इस लिपि को खरोष्ठी लिपि कहा गया । इस लिपि का प्रचलन हमें ई.पू. तीसरी –चौथी सती में भारत के पश्चिमोत्तर भाग में प्राप्त होता है । सम्राट अशोक ने इस लिपि का प्रयोग सहबाजगढ तथा मनसेहरा अभिलेखों में किया है । इसके अतिरिक्त शक् क्षत्रपों तथा कुशाणवंशीय राजाओं की मुद्राओं में भी इस लिपि में लेख प्राप्त हुए हैं । पार्थियन बैक्ट्रीयन ग्रीक राजाओं की मुद्राओं तथा अनेक बौद्ध लेखों में भी खरोष्ठी का प्रयोग प्राप्त हुआ है ।

खरोष्ठी लिपि को पहचानने के लिए प्रयत्न करने वाले विद्वान – सर्वप्रथम कर्नल टॉड ने पार्थियन ,ग्रीक , बैक्ट्रीयन ,शक एवं कुशाण शासकों की मुद्राओं का संग्रह किया । जिनमें पाया कि एक तरफ ग्रीक अक्षर तथा दूसरी ओर खरोष्ठी लिपि अंकित थी । ग्रीक वर्णों की पहचान तो सरलता से हो गई किंतु खरोष्ठी लिपि के बारे में संदेह बना रहा । 1824 ईस्वी में कर्नल टॉड ने सम्राट कैडफिशस् के सिक्कों पर उत्कीर्ण खरोष्ठी अक्षरों को सेसेनियन् अक्षर कहा तथा 1833 में प्रिंसेप महोदय ने सम्राट अपोलोडोटस् के सिक्कों पर उत्कीर्ण खरोष्ठी अक्षरों को 'पहलवी' अक्षर बतलाया।

जनरल वेंटुरां महोदय ने 1830 में मानिआल स्तूप का उत्खनन कराया तो उसमें खरोष्ठी लिपि से अंकित प्रभूत मात्रा में सिक्के एवं दो लेख प्राप्त हुए। अलेक्जेंडर कनिंघम तथा बंन्स आदि विद्वानों को भी ऐसे अनेक सिक्के मिले जिनमें एक तरफ तो

सुपाठ्य ग्रीक अक्षर थे परंतु दूसरी ओर एक अपरिचित लिपि थी ।

- इस प्रकार लंबे समय तक खरोष्ठी की पहचान को लेकर विद्वानों में सन्देह का वातावरण बना रहा तथा इसकी पहचान को लेकर भी प्रयत्न चलता रहा 1838 ईस्वी में प्रिंसेप ,कनिंघम एवं नाटिस् के सामूहिक प्रयत्न से खरोष्ठी के समस्त वर्णों की पहचान की तथा निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किए गए :–
- खरोष्ठी लिपि फारसी की तरह दाएं से बाएं लिखी जाती है यह लिपि आर्यतर परिवार की है ।
- यह सेमेटिक परिवार से संबद्ध आर्मेइक लिपि की उपज है ।
- भारत में प्राप्त खरोष्ठी के लिपि लेखो में प्रयोग की गई भाषा प्राकृत है पहलवी नहीं । इसमें लिखे लेख पाली भाषा में है।

खरोष्ठी लिपि की विशेषताएं :–

- इस लिपि में दीर्घ स्वरों का प्रयोग नहीं किया गया है ।
- यह दाएं से बाएं लिखी जाती है
- द्वित्व किए हुए अल्पप्राण व्यंजन के स्थान पर अकेले व्यंजन का प्रयोग होता है जैसे 'क्क' के स्थान पर ' क' ।
- अल्प प्राण और महाप्राण व्यंजनों के संयोग वर्णों के स्थान पर आगे आने वाले वर्ण का प्रयोग होता है जैसे ' क्ख' के स्थान पर 'ख' ।
- इसमें 38 वर्ण हैं।
- इस लिपि में 6 स्वर हैं ।

1. **अभ्यास प्रश्न–**

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 13 ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (भारत और विदेश)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- ब्राह्मी लिपि एवं उसके नामकरण को जान सकेगें।
- ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति विदेश में जैसे चीनी लिपि से, ग्रीक या फोनीशी लिपि से, सामी लिपि से हुई इसको जान सकेगें।
- ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति भारत में हुई इसको जान सकेगें।
- ब्राह्मी के द्वारा भारत में लिपियों का विकास जैसे ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियों एवं दक्षिणी शैली से विकसित लिपियों को जान सकेंगे।
- इसमें प्रयुक्त तकनीकि शब्दावली को जान सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय लिपियों को पढ़ने का वास्तविक प्रयत्न आज से लगभग 233 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ जब 1784 ईस्वी में सर विलियम जोंस के प्रयत्न से एशिया के इतिहास, शिल्प, साहित्य आदि के शोध के लिए कलकत्ता में 'एशिआटिक सोसाइटी बंगाल की स्थापना हुई। इसके अगले ही वर्ष चार्ल्स विल्किंस ने बंगला लिपि में नारायण पाल

(दसवीं शताब्दी) बादल के प्रस्तर स्तम्भ पर उत्कीर्ण पाल नृप की प्रशस्ति को पढ़ा। उसी वर्ष (1785 ई.) पंडित राधाकांत शर्मा ने अशोक स्तम्भ पर देवनागरी लिपि तथा संस्कृत भाषा में उत्कीर्ण बीसलदेव के दिल्ली टोपरा स्तम्भ अभिलेख (1220 विक्रम संवत् 1163 ई.) को पढ़ लिया। तदनन्तर क्रमशः सभी प्राचीन लेख पढ़े जाने लगे। इस प्रकार **इकाई–13** में **ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (भारत और विदेश)** के अर्न्तगत ब्राह्मी लिपि एवं उसका नामकरण, ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति विदेश में जैसे चीनी लिपि से, ग्रीक या फोनीशी लिपि से, सामी लिपि से तथा ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति भारत में एवं ब्राह्मी के द्वारा भारत में लिपियों का विकास जैसे ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियों एवं दक्षिणी शैली से विकसित लिपियों का अध्ययन किया जायेगा।

13.2 ब्राह्मी लिपि

यह पूर्णतया भारतीय लिपि है। इसके प्राचीनतम लेख 350 ई. पू. से लेकर 300 ई. तक मिलते हैं। सबसे प्राचीन लेख 'एरण' से प्राप्त सिक्का है, जो 350 ई. पू. का है। इसके पश्चात् अशोक के शिलालेख और स्तम्भ–लेख आदि हैं। इनका समय 250 ई. पू. है। ये कालसी, दिल्ली, जौगड़, गिरनार, शिद्दापुर से प्राप्त हुए हैं। तत्पश्चात् ईसा पूर्व तक ब्राह्मी लिपि में ये अभिलेख मिले है–**1.** घसुन्दी 250 ई. पू., **2.** दशरथ 200 ई. पू., **3.** भरहुत 150 ई. पू. **4.** मथुरा 150 ई. पू. से 100 ई. पू., **5.** हाथीगुम्फा 160 ई. पू. **6.** नानघाट 150 ई. पू.। ईसा के पश्चात् 350 ई. तक ब्राह्मी लिपि में विशेष उल्लेखनीय अभिलेख ये हैं–मथुरा, कुषाण, रुद्रदामन, सातकर्णि, नासिक, पुलुमायी, जगय्यपेट्ट। प्रो. ब्यूलर ने विशेष अध्ययन के बाद प्रस्तुत किया है कि ब्राह्मी लिपि में 41 अक्षर थे–9 स्वर और 32 व्यंजन।

स्वर–अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ=09

व्यंजन–क, ख, ग, घ। च, छ, ज, झ, ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व। श, ष, स, ह=32

इससे ज्ञात होता है कि ब्राह्मी में खरोष्ठी से 4 ध्वनियाँ अधिक है–आ, ई, ऊ, ऐ। दोनों में ङ अक्षर नहीं है।

13.3 ब्राह्मी लिपि का नामकरण

ब्राह्मी नाम के लिए 3 व्युत्पत्तियाँ बताई गईं हैं–

1. ब्रह्म या ब्रह्मा से उत्पन्न हुई है।
2. ब्रह्म (वेद या ज्ञान) की रक्षा के लिए इसे बनाया गया।
3. ब्राह्मणों ने इसे बनाया या प्रयुक्त किया।

उपर्युक्त तीनों मतों में प्रथम मत अधिक उचित प्रतीत होता है। ब्रह्म से सम्बद्ध ज्ञान आदि को ब्राह्म या ब्राह्मी कहा जाता था। यजुर्वेद(**अध्याय 31 मन्त्र 20, 21**) में ब्रह्म से सम्बद्ध अर्थ में ब्राह्म और ब्राह्मी का प्रयोग मिलता है–'**रुचाय ब्राह्मये**'(यजुर्वेद 31–20)'**रुचं ब्राह्ममण**'(यजुर्वेद 31–32)। चीनी विश्वकोश '**फा युआन चु लिन्**' में ब्राह्मी लिपि का निर्माता ब्रह्म या ब्रह्मा नामक आचार्य माना गया है। अमरकोषकार अमरसिंह ने संस्कृत को ब्राह्मी एवं भारती अर्थात् भारतीय भाषा कहा है–'**ब्राह्मी तु भाषा गीर्वाण्वाणी सरस्वती**' इस भाषा का प्रयोग वेद–ज्ञान की रक्षा के लिए किया गया।

भारतीय विद्वानों और ब्राह्मणों ने इसका प्रयोग किया। अतः पूर्वोक्त तीनों व्युत्पत्तियाँ कुछ हद तक ठीक बैठतीं हैं।

13.4 ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (विदेश में)

ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति के विषय में बहुत विवाद है। पाश्चात्य विद्वानों ने इसकी उत्पत्ति फोनीशी लिपि, सामी लिपि या चीनी लिपि से माना है। भारतीय विद्वानों ने इसकी उत्पत्ति भारतीय मानी है। विचार करने से ज्ञात होता है कि पाश्चात्य विद्वानों के मत अत्यन्त अपुष्ट आधारों पर हैं। कुछ केवल मनोरंजक कल्पना मात्र रह गए हैं।

13.4.1 चीनी लिपि से उत्पत्ति

फ्रेंच विद्वान् कुपेरी ने चीनी से ब्राह्मी की उत्पत्ति मानी है। चीनी और ब्राह्मी पूर्णतया भिन्न हैं। चीनी चित्रलिपि है और ब्राह्मी ध्वनि–लिपि है। दोनों के वर्णों और ध्वनियों में कोई साम्य नहीं है। यह मत अब केवल मनोरंजन के लिए उद्धृत किया जाता है।

13.4.2 ग्रीक या फोनीशी लिपि से उत्पत्ति

इस मत के समर्थक है–विल्सन, प्रिंसेप, अल्फ्रेड मूलर, सेनार्ट आदि। इनका मत है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय से यूनानियों से सम्पर्क हुआ और उनसे यह लिपि सीखी। इस विषय में उल्लेखनीय है कि सिकन्दर का आक्रमण 327 ई. पू. में हुआ था। इससे पूर्व भारत में लेखन–कला का प्रचार था। ब्यूलर और डिरिंजर का भी यही मत है। सिकन्दर से पूर्व भारत में भारतीय लिपि प्रचलित थी, अतः उसके बाद लिपि का प्रारम्भ मानना असंगत है।

13.4.3 सामी लिपि से उत्पत्ति

ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति सेमेटिक (सामी) भाषाओं से हुई है। इस मत के समर्थक व्यूलर, विलियम जोन्स, बेबर, टेलर आदि हैं। डॉ. डेविड डिरिंजर ने भी **'द अल्फाबेट'** पुस्तक में ब्यूलर का समर्थन किया है। डिरिंजर ने अपने समर्थन में 4 तर्क दिए है। **1.** सामी और ब्राह्मी लिपियों में साम्य है। **2.** सिन्धुघाटी लिपि चित्रात्मक लिपि है। उससे वर्णात्मक लिपि नहीं निकल सकती है। **3.** ब्राह्मी लिपि पहले दाएँ से बाएँ लिखी जाती थी। **4.** भारत में पाँचवीं शती ई. पू. से पहले के लेख नहीं मिलते हैं।

इस प्रकार सामी और ब्राह्मी में लिपि का साम्य नाम मात्र का है। जो समता है, वह भी क्लिष्ट–कल्पना है। सामी दाएँ से बाएँ लिखी जाती है, ब्राह्मी बाएँ से दाएँ। सामी के संकेत अपूर्ण और अपर्याप्त हैं। **1.** सामी में केवल 22 वर्ण हैं, ब्राह्मी में 41। **2.** सामी में स्वर और व्यंजनों का कोई क्रम नहीं है। आदि से अन्त तक स्वर और व्यंजनों की खिचड़ी है। ब्राह्मी में स्वर और व्यंजन पृथक्–पृथक् हैं। स्वरों में भी मूल स्वर, बाद में संयुक्त स्वर। व्यंजन भी स्थान और प्रयत्न के अनुसार क्रमबद्ध हैं। **3.** प्रारम्भ में दिखाया जा चुका है कि चित्रात्मक और भावात्मक लिपि से ही ध्वनि लिपि का विकास हुआ है। इसी प्रकार मोहनजोदड़ो की लिपि से ब्राह्मी का विकास भारतीय रूप में पूर्ण संभव है। आज तक ब्राह्मी के तीन अभिलेखों में ही कुछ अंश दाएँ से बाएँ लिखे मिलते हैं। इसका कारण ज्ञात होता है कि इन पर खरोष्ठी का कुछ प्रभाव था। अशोक आदि के सारे अभिलेख बाएँ से दाएँ ही लिखे हुए हैं। इनकी संख्या बहुत बड़ी है। **4.** सिन्धुघाटी के अभिलेख 500 ई. पू. से पहले के हैं। अन्य अभिलेख भावी खुदाइयों आदि पर निर्भर हैं।

13.5 ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (भारत में)

विश्व की किसी भाषा में स्वरों और व्यंजनों का इस प्रकार का क्रम नहीं है। इसमें केवल भारतीय ध्वनियों का समावेश है। संयुक्त वर्णों को स्पष्ट रूप में सूचित करना ब्राह्मी की विशेषता है। स्वर की मात्राओं को व्यंजन के साथ जोड़ने की विशेषता केवल ब्राह्मी में है। स्वर और व्यंजन के इतने पूर्ण संकेत अन्य किसी भाषा में नहीं हैं। कोई भारतीय परम्परा इस लिपि को बाहरी नहीं मानती। अंक प्रणाली और दशमलव की पद्धति भारतीयों की वैज्ञानिकता का प्रतीक है। जो ऋषि अंक प्रणाली का आविष्कार कर सकते हैं, वे वर्ण लिपि का भी आविष्कार कर सकते हैं। ब्राह्मी में वर्णों की जो गोल रचना या वृत्तात्मकता है, वह अन्य किसी लिपि में नहीं है।

13.5.1 ब्राह्मी के द्वारा भारत में लिपियों का विकास

ईसा पूर्व 350 से लेकर 350 ई. तक प्रयुक्त लिपि का नाम ब्राह्मी रहा। इसके पश्चात् ब्राह्मी लिपि के लिखने के दो प्रकार मिलते हैं, जिनके आधार पर ब्राह्मी की दो श्रेणियाँ मानी जातीं हैं– 1. उत्तरी, 2. दक्षिणी। उत्तरी शैली का प्रचार विन्ध्य पर्वत के उत्तर में रहा और दक्षिणी का प्रचार उसके दक्षिण में। इस प्रकार उत्तरी भारत की लिपियों का विकास ब्राह्मी की उत्तरी शैली से हुआ और दक्षिणी भारत की लिपियों का विकास दक्षिणी शैली से हुआ।

13.5.1.1 ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियाँ

उत्तरी शैली से पाँच लिपियों का विकास हुआ। इसका परिचय इस प्रकार है–

1. **गुप्तलिपि**–गुप्तवंशी राजाओं के अभिलेख इसी लिपि में हैं। अतः इसे गुप्त लिपि कहा जाता है। इसका प्रचार चौथी और पाँचवीं शती ई. में रहा। इस लिपि के मुख्य अभिलेख हैं–प्रयाग प्रशस्ति (375 ई.), बिलसद (414ई.), इन्दौर (465 ई.)।

2. **कुटिल लिपि**–यह लिपि गुप्त लिपि से विकसित हुई है। इसमें स्वरों की मात्राओं की आकृति कुटिल अर्थात् टेढ़ी है। अतः इसे कुटिल लिपि कहा गया है। इससे ही नागरी और शारदा लिपियों का विकास हुआ है।

3. **प्राचीन नागरी लिपि**–उत्तर भारत में इसका प्रचार 9वीं ई. के अन्तिम चरण से मिलता है। यह मूलतः उत्तरी लिपि है, परन्तु इसके प्राचीन अभिलेख 8वीं शती ई. से प्रारम्भ होकर 16वीं शती ई. के अन्तिम भाग तक दक्षिण में मिलते हैं। नागरी लिपि को ही देवनागरी लिपि भी कहते हैं। प्राचीन नागरी की पूर्वी शाखा से बंगला लिपि का विकास हुआ। पश्चिम शाखा से राजस्थानी, गुजराती, महाराष्ट्री और महाजनी आदि लिपियाँ विकसित हुईं। दक्षिण में इसको नन्दी नागरी कहते हैं।

4. **शारदा लिपि**–इस लिपि का प्रचार पश्चिमोत्तर भारत के कश्मीर और पंजाब में हुआ। 8वीं शती ई. तक वहाँ कुटिल लिपि थी। उसी से शारदा लिपि निकली। शारदा का सबसे प्राचीन लेख 10वीं शती ई. का माना जाता है। वर्तमान समय की कश्मीरी टाकरी, गुरुमुखी, डोगरी आदि लिपियाँ इसी से निकलीं हैं।

5. **बंगला लिपि**–इसकी उत्पत्ति प्राचीन नागरी से 10वीं शती ई. के लगभग हुई। इससे नेपाली, वर्तमान बंगला, मैथिली और उड़िया लिपियाँ निकलीं हैं।

13.5.1.2 ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से विकसित लिपियाँ

ब्राह्मी की दक्षिणी शैलीसे 6 लिपियाँ विकसित हुईं हैं। इसका परिचय इस प्रकार है–

1. **पश्चिमी लिपि**–इसके लेख पाँचवी शती ई. से 9वीं शती ई. तक मिलते हैं। यह लिपि गुजरात, काठियावाड़, नासिक, खानदेश, हैदराबाद, कोंकण, मैसूर आदि के लेखों में मिलती है। पाँचवी शती ई. के लगभग इसका प्रवेश राजपूताना और मध्य भारत में भी पाया जाता है। पश्चिमी प्रदेशों में मिलने के कारण इसको पश्चिमी लिपि कहते हैं।

2. **मध्यप्रदेशी लिपि**–यह लिपि मध्यप्रदेश, हैदराबाद के उत्तरी भाग और बुन्देलखण्ड में 5वीं से 8वीं शती ई. तक मिलती है। इस लिपि के अक्षरों के सिर चौखूँटे या सन्दूक की आकृति के होते हैं। इनका भीतरी भाग कभी खाली और कभी भरा हुआ है। अक्षरों की आकृति समकोणों वाली है।

3. **तेलुगुकन्नड़ लिपि**–ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से इस लिपि का विकास हुआ है। इससे ही वर्तमान तेलुगु और कन्नड़ लिपियाँ निकलीं हैं। यह लिपि 5वीं शती ई. से 14वीं शती ई. तक बम्बई वर्तमान महाराष्ट्र प्रांत के दक्षिणी भाग में, आंध्र प्रांत के दक्षिणी भाग में, मद्रास के उत्तर पूर्वी भाग में तथा मैसूर के कुछ भागों में प्रचलित थी। पाँचवीं से 14वीं शती ई. तक इसके कई रूप भेद हुए।

4. **ग्रन्थ लिपि**–यह लिपि मद्रास में प्रचलित रही। 7वीं शती ई. से 15वीं शती ई. तक इसके कई रूपांतर हुए। इससे वर्तमान ग्रन्थ लिपि निकली है। इससे ही मलयालम और तेलगु लिपियाँ विकसित हुईं हैं। इस क्षेत्र में तमिल लिपि का प्रचार रहा था, परन्तु वह अपूर्ण थी। अतएव संस्कृत के ग्रन्थों को लिखने के लिए इस लिपि का प्रयोग होता था। इसलिए इसका नाम ग्रन्थ पड़ा।

5. **कलिंग लिपि**–कलिंग के आस पास 7वीं से 11वीं शती ई. तक इसका प्रचार रहा। इसके प्राचीन लेख मध्यप्रदेशी लिपि में हैं और बाद के लेख नागरी, तेलगु, कन्नड़ और ग्रन्थ लिपि में मिलते हैं।

6. **तमिल लिपि**–यह भी दक्षिणी ब्राह्मी से निकली है। इससे वर्तमान तमिल लिपि का विकास हुआ है। 7वीं सदी ई. से आज तक तमिल ग्रन्थ लिपि में मिलते हैं। इसके अधिकांश अक्षर ग्रन्थ लिपि से मिलते जुलते हैं। तमिल का ही घसीट रूप **'वट्टलुत्तु'** लिपि है। इसके अक्षर प्रायः गोलाई लिए हुए होते हैं। यह 7वीं से 14वीं शती ई. तक मद्रास के पश्चिमी और दक्षिणी भाग में प्रचलित रही।

13.6 आदर्श लिपि के रूप में देवनागरी लिपि एवं उसका नामकरण

वर्तमान देवनागरी लिपि प्राचीन नागरी लिपि के पश्चिमी रूप से विकसित हुई है। नागरी लिपि को नागरी और देवनागरी दोनों नामों से सम्बोधित किया जाता है। नागरी लिपि का समुचित विकास 10वीं शताब्दी ई. से माना जाता है। प्राचीन अभिलेखों की लिखावट के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भीमदेव प्रथम (1029) ई. और भीमदेव द्वितीय (1200ई.) तथा उदयवर्मन (1200ई.) के अभिलेखों में प्रयुक्त लिपि वर्तमान हिन्दी के बहुत समीप आ गई है। इनमें स्वरों और व्यंजनों की बनावट वर्णों के ऊपर शिरोरेखा तथा मात्राओं के चिन्ह बहुत कुछ वर्तमान हिन्दी के तुल्य हो गए हैं।

इस प्रकार वर्तमान देवनागरी लिपि का प्रारम्भ 1000 से 1200 ई. तक मानना उचित है। बाद में आवश्यक संशोधन परिवर्तन होते रहे हैं। 18वीं शती ई. की नागरी लिपि प्रायः वर्तमान नागरी के तुल्य पूर्ण विकसित हो गई थी। केवल कुछ मात्राओं में अन्तर पाया जाता है।

नागरी या देवनागरी नाम के विषय में पर्याप्त मतभेद है। इस विषय में आज तक कोई अन्तिम निर्णय नहीं हुआ है। इस विषय में ये सुझाव दिये गए हैं– 1. यह लिपि नगरों में प्रचलित थी, अतः नागरी नाम पड़ा। 2. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने से इसका नाम नागरी पड़ा। 3. श्री शाम शास्त्री का कथन है कि देवमूर्तियों के सांकेतिक त्रिकोण या चक्र आदि चिन्हों को देवनगर कहते थे। उसके मध्य में लिखे जाने के कारण इन अक्षरों को देवनागरी कहा गया। 4. देवनगर स्थान से उत्पन्न होने के कारण देवनागरी नाम पड़ा। पुष्ट पुमाणों के अभाव में कोई भी मत प्रामाणिक नहीं है।

आदर्श लिपि के रूप में देवनागरी–आदर्शलिपि में प्रयुक्त गुण इस प्रकार हैं–

1. **ध्वनि और लिपि में एकरूपता**–जो बोला जाए वही लिखा जाए तथा जो लिखा जाए, वही बोला जाए। यह गुण देवनागरी लिपि में है।

2. **एक ध्वनि के लिए एक चिन्ह**–प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र चिन्ह होना चाहिए। एक के लिए अनेक चिन्ह या अनेक के लिए एक चिन्ह भाषा की अवैज्ञानिककता के सूचक है। हिन्दी में प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र एक–एक चिन्ह है। इसके विपरीत रोमन लिपि में एक ही ध्वनि के लिए अनेक स्वरों और व्यंजनों का प्रयोग होता है। दूसरी और अनेक स्वरों के लिए एक ही स्वर का प्रयोग किया जाता है।

3. **समग्र ध्वनियों की अभिव्यक्ति**–आदर्श लिपि में समस्त ध्वनियों को अंकित करने की क्षमता होनी चाहिए। आज संसार की जितनी लिपियाँ हैं, उनमें देवनागरी लिपि ही समस्त ध्वनियों को अंकित करने की सबसे अधिक क्षमता रखती हैं। रोमन और उर्दू लिपियाँ इस विषय में बहुत अपूर्ण सिद्ध होतीं हैं। सूक्ष्मतम संकेत निर्देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनि चिन्हों का आविष्कार किया गया है। इसका माध्यम कुछ अंश तक रोमन लिपि को रखा गया है।

4. **असंदेह**–आदर्श लिपि की विशेषता है कि वह सुपाठ्य हो और किसी प्रकार का संदेह न हो। एक संकेत से दूसरे संकेत का भ्रम न हो। स्पष्टता और असन्देह की दृष्टि से देवनागरी लिपि रोमन और उर्दू से अधिक उत्कृष्ट सिद्ध होती है।

5. **लेखन में एकरूपता**–आदर्श लिपि वही है, जिसमें प्रत्येक वर्ण एक ही रूप में रहे। देवनागरी में यह विशेषता है।

6. **लिपि सौन्दर्य**–आदर्श लिपि में सुन्दरता गुण का समावेश होना चाहिए।

7. **यांत्रिक सुविधा**–मुद्रण और टंकण की दृष्टि से सुविधा एवं सरलता हो।

8. **आशुलेखन**–वर्तमान वैज्ञानिक युग की आवश्यकता है कि आदर्श लिपि में आशुलेखन की अधिक क्षमता होनी चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आदर्श लिपि के सभी गुण देवनागरी लिपि में प्राप्य हैं।

देवनागरी लिपि में दोष—देवनागरी लिपि में कुछ दोष भी हैं जिसका शुद्धिकरण करना जरुरी है—जैसे 1. इ की मात्रा वर्ण से पूर्व लगना अवैज्ञानिक है। प्राचीन ब्राह्मी में यह वर्ण के बाद में लगती थी। 2. हलन्त र् को अनेक प्रकार से लिखना। 3. अ ण ल आदि का दो प्रकार से लिखा जाना। 4. ख—रव, ध—घ, भ—म आदि में स्पष्ट अन्तर का न होना। 5. संयुक्त व्यंजनों का एकरूप में न लिखा जाना। 6. अंग्रेजी, उर्दू आदि की क, ख, ग, ज आदि ध्वनियों का देवनागरी लिपि में अभाव। इनमें से कुछ न्यूनताओं का निराकरण किया गया है। शेष न्यूनताओं का भी निराकरण अपेक्षित है।

बोध प्रश्न—1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइये।**
   I. पश्चिमी लिपि कहाँ पायी जाती है। (गुजरात / मध्यप्रदेश)
   II. शारदा लिपि कहाँ पायी जाती है। (गुजरात / कश्मीर)
2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।**
   I. ग्रन्थ लिपि ....पायी जाती है। (मद्रास / गुजरात)
   II. बंगला लिपि से ....निकली है। (शारदा / उडिया)

बोध प्रश्न—2

1. देवनागरी लिपि को स्पष्ट कीजिए।

....

....

अभ्यास प्रश्न 1

1. ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियों को स्पष्ट कीजिए?

13.6 सारांश

अशोक कालीन (ब्राह्मी लिपि) अभिलेखों को पढ़ने का श्रेय जेम्स प्रिंसेप नामक यूरोपीय विद्वान् को है। इसके पश्चात् भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास का अन्वेषण तथा शोध प्रारम्भ हुआ। प्राचीन शिलालेख, दानपत्र, सिक्कों, मुद्राओं, मूर्तियों आदि के संग्रह, अध्ययन, अध्यापन तथा शोध कार्य में इतिहासकार तथा पुरातत्वविद् आधुनिक समय तक निरन्तर संलग्न हैं। इस प्रकार **इकाई—13** में **ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति (भारत और विदेश)**के अन्तर्गत ब्राह्मी लिपि एवं उसका नामकरण, ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति विदेश में जैसे चीनी लिपि से, ग्रीक या फोनीशी लिपि से, सामी लिपि से तथा ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति भारत में एवं ब्राह्मी के द्वारा भारत में लिपियों का विकास जैसे ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियाँ एवं दक्षिणी शैली से विकसित लिपियों का अध्ययन किया गया।

13.7 शब्दावली

मुद्रण — रेखांकन

अंकित — लिखित

सूक्ष्मतम — छोटा से छोटा

सुपाठ्य – पढ़ने योग्य
सौन्दर्य – सुन्दरता

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- अभिलेखमंजूषा, रणजीत सिंह सैनी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन दिल्ली–2000
- उत्कीर्णलेखपंचकम्, झा बन्धु, वाराणसी, 1968
- उत्कीर्णलेखस्तबकम्, जियालाल कम्बोज, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
- भारतीय अभिलेख, एस.एस.राणा, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, 1978
- भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गौरीशंकर, हीराचन्द ओझा, अजमेर, 1918
- प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र और अभिलेखिकी, नारायण, अवध किशोर एवं ठाकुरप्रसाद वर्मा, वाराणसी 1970
- भारतीय पुरालिपि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, राजबली पाण्डेय, 1978
- भारतीय पुरालिपि शास्त्र, ब्यूलर जार्ज, (हिन्दी अनु.) मंगलनाथ सिंह, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली 1966
- अक्षरकथा, मुले गुणाकर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली 2003
- लेखनकथा का इतिहास (खण्ड 1–2), ईश्वरचन्द्र राही, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उ.प्र. 1983
- भारतीय पुरालिपि विद्या, डी.सी सरकार, (हिन्दी अनु.) कृष्णदत्त वाजपेयी, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1996
- भारतीय पुरालेखों का अध्ययन, शिवस्वरूप सहाय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
- Selected Inscriptions (Vol.1) D.C.Sarkar, Calcutta, 1965
- Indian Chronlogy (Solar, Lunar and Planetary), Pillai, Swami Kannu & K.S. Ramchadran Asian Education Service 2003
- Text Book of Indian Epigraphy, K. Satymurty, Lower Price Publication, Delhi 1992

13.9 बोध प्रश्न/उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) गुजराज (ii) कश्मीर
2. (i) मद्रास (ii) उड़िया

बोध प्रश्न–2

1. वर्तमान देवनागरी लिपि प्राचीन नागरी लिपि के पश्चिमी रूप से विकसित हुई है। नागरी लिपि को नागरी और देवनागरी दोनों नामों से सम्बोधित किया जाता है। नागरी लिपि का समुचित विकास 10वीं शताब्दी ई. से माना जाता है। प्राचीन

अभिलेखों की लिखावट के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भीमदेव प्रथम (1029) ई. और भीमदेव द्वितीय (1200ई.) तथा उदयवर्मन (1200ई.) के अभिलेखों में प्रयुक्त लिपि वर्तमान हिन्दी के बहुत समीप आ गई है। इनमें स्वरों और व्यंजनों की बनावट वर्णों के ऊपर शिरो रेखा तथा मात्राओं के चिन्ह बहुत कुछ वर्तमान हिन्दी के तुल्य हो गए हैं। इस प्रकार वर्तमान देवनागरी लिपि का प्रारम्भ 1000 से 1200 ई. तक मानना उचित है। बाद में आवश्यक संशोधन परिवर्तन होते रहे हैं। 18वीं शती ई. की नागरी लिपि प्रायः वर्तमान नागरी के तुल्य पूर्ण विकसित हो गई थी। केवल कुछ मात्राओं में अन्तर पाया जाता है।

- नागरी या देवनागरी नाम के विषय में पर्याप्त मतभेद है। इस विषय में आज तक कोई अन्तिम निर्णय नहीं हुआ है। इस विषय में ये सुझाव दिये गए हैं–1. यह लिपि नगरों में प्रचलित थी, अतः नागरी नाम पड़ा। 2. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने से इसका नाम नागरी पड़ा। 3. श्री शाम शास्त्री का कथन है कि देवमूर्तियों के सांकेतिक त्रिकोण या चक्र आदि चिन्हों को देवनगर कहते थे। उसके मध्य में लिखे जाने के कारण इन अक्षरों को देवनागरी कहा गया। 4. देवनगर स्थान से उत्पन्न होने के कारण देवनागरी नाम पड़ा। पुष्ट प्रमाणों के अभाव में कोई भी मत प्रामाणिक नहीं है।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 14 लेखन साधन–पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- लेखन साधन पत्थर के बारें में जान सकेंगें।
- लेखन साधन स्तम्भ के बारें में जान सकेंगें।
- लेखन साधन धातुओं के प्लेट सोना, ताँबा, पीतल, कांसा, लोहा के बारें में जान सकेंगें।
- लेखन साधन पेन, ब्रश, रंग इत्यादि के बारें में जान सकेंगें।
- प्रयुक्त तकनीकि शब्दावली के बारें में जान सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

मानव जाति के इतिहास में लेखन सामग्री ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। लेखन सामग्री ने न केवल मानव संस्कृति व इतिहास को सुरक्षित रखने में योगदान दिया है, बल्कि लिपि, भाषा और मनुष्य की चिंतन धारा को भी काफी गहराई से प्रभावित किया है। अतः प्राचीन लेखन सामग्री को जानने का मतलब है, प्राचीन संस्कृति को ठीक से समझना। इस प्रकार **इकाई–14 लेखन साधन–पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि** के अन्तर्गत लेखन साधन पत्थर , स्तम्भ, एवं

धातुओं के प्लेट सोना, ताँबा, पीतल, कांसा, लोहा और पेन, ब्रश, रंग इत्यादि के बारें में अध्ययन किया जायेगा।

14.2 लेखन साधन

लेखन के लिए सामग्री का चुनाव दो बातों पर निर्भर था प्रथम देश के विभिन्न भागों में उपयुक्त सामग्री की सुलभता, यद्यपि जब एक सामग्री देश के एक भाग में प्रचलित हो जाती है तो वह दूसरे भागों में भी पहुँच जाती है, तथा द्वितीय अभिलेखों की प्रकृति, उदाहरणार्थ लंबी–लंबी पुस्तकें तथा साधारण पत्र लचीले कोमल तथा शीघ्र नष्ट होने वाली सामग्री पर तथा धार्मिक अनुशासन, राजाओं की प्रशस्तियाँ, व्यावहारिक लेख इत्यादि पत्थर, ताँबा, लोहा, चाँदी जैसी चिरस्थायी वस्तुओं पर उत्कीर्ण किये जाते थे।

14.2.1 पत्थर

जब से मनुष्य ने गुहा की दीवार पर पहली खरोच मारी, वह अपनी कला की स्थिरता से प्रभावित हुआ। **'प्रस्तर लेखन'** टिकाऊपन का सूचक बन गया। जब लेखनकला व्यापक हुई, वे सभी आदेश जो महत्वपूर्ण और स्थायी समझे गये, पत्थर पर खोदे गये। बौद्ध सम्राट अशोक ई. पू. की तीसरी शताब्दी में विशेषरूप से निर्देश करते हैं कि उन्होंने अपने आदेशों को पत्थर पर इसलिए खुदवाया कि वे बहुत समय तक बने रह सके। कोमल लेखन के अन्य और लचीले उपकरणों के प्रचार के बावजूद स्थायी विवरणों के लेखन के लिए पत्थर का प्रयोग वर्तमान काल तक जारी रहा है। लेखन के माध्यम के रूप में पत्थर निम्नांकित रूपों में प्रयुक्त हुआ है–

1. चिकनी की गयी या कभी–कभी खुरदरी चट्टाने।
2. स्तम्भ।
3. पट्टिका
4. मूर्ति का आसन या पृष्ठभाग
5. पिटक या बर्तन की कोरें तथा ढक्कन
6. स्फटिक
7. मन्दिर की दीवारें। फर्श। तथा स्तम्भ।
8. गुहाएँ

जहाँ तक प्रस्तर लेखन के विषय का सम्बन्ध है, उसमें निम्नांकित प्रकार सम्मिलित हैं–

1. राजायों के आदेश या घोषणायें।
2. राजप्रशस्ति
3. राजाओं के बीच की सन्धियाँ।
4. स्वीकृतियाँ (समझौते)
5. दान
6. स्मृतियाँ

7. समर्पण
8. भूमि दान
9. काव्य स्राव
10. साहित्यिक कृतियाँ
11. कभी–कभी बृहत् धार्मिक ग्रन्थ

वर्णों के खोदने या अंकित करने के पहले एक विशेष शिला, प्रस्तर का पट्ट या खण्ड चुना जाता था, उसे छीलकर चिकनाकर लिया जाता था और तब घिसकर चिकना किया जाता था। ऐसे अपवाद भी प्राप्त हुए हैं कि लिखने के लिए खुरदरे पत्थर का प्रयोग किया गया है। पहले पत्थर पर सीधी रेखाएँ खीचीं जातीं थीं, फिर सुलेखक उन पर स्याही या रंग से लिखता था और अन्त में खोदने वाला वर्णों को खोदकर अंकित कर देता था। कलात्मक प्रतीति होने के लिए पार्श्व, शीर्ष एवं अधोभाग में स्थान रिक्त छोड़ दिया जाता था। कभी–कभी लेखन क्षेत्र चारों ओर के किनारों से नीचा कर दिया जाता था। यदि खोदने के समय कोई टुकड़ा उखड़ जाता तो इस प्रकार के खोखले को किसी रूप्य वस्तु (प्लास्टिक) से भर दिया जाता था और तब उस पर अक्षर लिखे जाते थे। खुदे हुए विषय के प्रारम्भ तथा अन्त में प्रायः कोई मांगलिक या धार्मिक चिन्ह भी खोद देते थे।

14.2.2 स्तम्भ

प्रस्तर से निर्मित अथवा अन्य सामग्री से निर्मित स्तम्भों पर अभिलेख उत्कीर्ण किए जाने की परम्परा प्राप्त होती है। सबसे पुराने स्तम्भ अशोक द्वारा लिखवाए गए उपलब्ध होते हैं। कुछ स्तम्भ विजय स्तम्भ, ध्वज का स्तम्भ अथवा पताका दण्ड प्रायः मंदिरों में स्थापित किये जाते हैं। विजय–स्तम्भ प्रायः किसी शासक की विजय की घटना का उल्लेख करते हैं। प्रयाग में स्थित समुद्रगुप्त के लेख से युक्त स्तम्भ, दिल्ली में मेहरौली का लौह स्तम्भ अभिलेख विजय प्रशस्ति है। मेहरौली लौह स्तम्भ लेख नरेश चन्द्र के नाम से उल्लिखित है। यह नरेश चन्द्र गुप्त (द्वितीय) का माना जाता है। इस स्तम्भ का लोहा विशेष पद्धति से निर्मित है। अनेक शताब्दियों से खुले में स्थापित होते हुए भी इस पर जंग का प्रभाव नहीं पड़ा। यह स्तम्भ निर्माण की उस समय प्रचलित लौह की विशिष्ट पद्धति के ज्ञान का संकेत करती है। यश प्राप्ति इत्यादि के लिए कीर्ति–स्तम्भ अथवा यश स्तम्भ स्थापित किये जाते थे। यज्ञ से सम्बन्धित यूप स्तम्भ की स्थापना का उल्लेख प्राप्त होता है। भरहुत, सांची तथा नागार्जुनीकोंडा से (बौद्ध) धार्मिक स्तम्भ मिलते हैं।

14.2.3 धातुओं के प्लेट

पत्थर पर या ईटों पर खोदे गये अभिलेखों की तरह के लेखों के लिखने के लिए पत्थर और ईंट से अधिक स्थायी एवं सुविधाजनक सामग्री धातु थी। यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिए कि पत्थर और ईंट का प्रयोग अति प्राचीन काल से आज तक प्रायः समान रूप से हुआ है, जब कि धातु प्राचीन काल में अल्पता से प्रयुक्त हुईं और बाद के काल में अधिकता से इसका प्रयोग हुआ। लेखन के लिए प्रयुक्त धातुओं में सोना, चाँदी, ताँबा, जस्ता, पीतल, लोहा तथा रांगा सम्मिलित किये जा सकते हैं।

14.2.3.1 सोना

बहुमूल्य होने के कारण इस धातु का प्रयोग बहुत ही कम होता था। तथापि बौद्ध जातकों में सोने पर धनी दुकानदारों के महत्वपूर्ण कौटुम्बिक लेखों, राजादेशों, काव्य

छन्दों तथा नीति सम्बन्धी सूक्तियों का प्रायः निर्देश मिलता है। किन्तु आसानी से माना जा सकता है कि जातक ग्रंथों में समाज का आदर्श चित्र प्रस्तुत किया जाता था और उसमें काल्पनिक तत्वों का विशिष्ट स्थान है। बर्नेल का कथन है कि राजपत्रों तथा भूमिदान के लिए भी सोना प्रयुक्त होता था। कनिघंम ने खरोष्ठी में दान अभिलेख वाला एक स्वर्णपट्ट तक्षशिला के समीप गंगु स्तूप से प्राप्त किया था। बरमा में हाज्वा ग्राम में दो स्वर्णपत्र पाये गये हैं। जिन पर बौद्ध सूत्र **'ये धम्मा हेतुप्रभवा'**इत्यादि तथा इसके बाद पालि छन्द लिखा था। लिपिशास्त्रानुसार उनका सम्बन्ध ईसा की चौथी या पाँचवी शती से है।

14.2.3.2 ताँबा

लिखने के लिए सब से अधिक प्रयोग में आने वाली धातु ताँबा है। अति प्राचीन काल से यह प्रयोग में आ रहा है। अभिलिखित ताँबे का पत्र या टुकड़ा अभिलेख के विषय के अनुसार ताम्रपट्ट, ताम्रपत्र, ताम्रशासन, शासनपत्र या दानपत्र कहलाता था। भूमिदान पत्रों को छोड़कर जो स्थायी रूप से ताँबे पर ही खोदे जाते थे और संस्कारपूर्वक प्रतिगृहीता को दिये जाते थे, ताँबे पर लिखे जाने वाले विषय प्रायः वही होते थे जो पत्थर पर।

14.2.3.3 पीतल

स्वतंत्र अभिलेखों के लिए लेखनोपकरण के रूप में पीतल का प्रयोग शायद ही कभी हुआ है। पीतल की बड़ी मूर्तियों के पादपीठ या छोटी पीतल की मूर्तियों की पीठ पर बहुत छोटे अभिलेख प्राप्त हुए हैं। ऐसी मूर्तियों की प्राचीनतम तिथि ईसा की सातवीं शती है और प्रायः वे सब जैन धर्म से सम्बन्धित हैं। कुछ जैन मन्दिरों में पीतल के पत्र प्राप्त होते हैं जिन पर धार्मिक सिद्धांत अंकित हैं।

14.2.3.4 कांसा

जहाँ तक इस धातु का सम्बन्ध है केवल काँसे ही घंटियों पर दाताओं के नाम तथा दानतिथि खुदी पायी जाती है। स्वतंत्र लेखन के लिए पीतल की तरह इसका प्रयोग विरल था।

14.2.3.5 लोहा

यद्यपि उपकरणों, शस्त्रों तथा अन्य मानवीय आवश्यकताओं के लिए लोहे का प्रयोग सामान्य रूप से होता था, लिखने के लिए इसका प्रयोग यदा–कदा ही होता था। दिल्ली में कुतुबमीनार के समीप स्थित मेहरौली का लौह स्तम्भ अभिलेख का एकमात्र उदाहरण है। जहाँ लोहे के ऊपर बहुत बड़ी प्रशस्ति खुदी हुई है। शिव–त्रिशुल तथा लोहे की बनी हुई तोपों पर छोटे–छोटे अभिलेखों के कुछ उदाहरण पाये जाते हैं। लिखने के लिए लोहे का विरल प्रयोग सम्भवतः इस कारण था कि इसमें साधारण रूप से मोरचा लग जाता है और बरबाद हो जाता है। मेहरौली का लौह स्तम्भ एक विरल अपवाद है जहाँ मोरचा न लगने वाला लोहा बनाया गया था।

14.2.4 पेन, ब्रश, रंग इत्यादि

पेन एवं ब्रश–लिखने के औजार साधारण रूप में लेखनी कहे जाते हैं। यह शब्द भारत के बड़े–बड़े महाकाव्यों में आता है। यह एक व्यापक शब्द है और कलम, लौह, लेखनी, पेन्सिल, नरकुल, लकड़ी, लोहा, रेशों या बालों से बने ब्रुश (तूलिका) के अर्थ

में अनेक प्रकार से प्रयुक्त हुआ है। इस शब्द के व्यापक प्रचार के पीछे यह तर्क है कि लेखन से खुदाई और रंगाई या लेखन सामग्री दोनों का बोध होता था। नरकुल या नरसल से बनी लेखनी को आमतौर पर कलम कहते थे, मगर इस शब्द की व्युत्पत्ति स्पष्ट नहीं है। कलम के लिये देशी संस्कृत नाम 'इषीका' या 'ईषिका' था, जिसका शब्दार्थ है नरकुल। नरकुल, बाँस या लकड़ी के टुकड़ोत्र को हमारी आज की (यानि आज से करीब सौ साल पहले की) कलमों की तरह बनाकर उनसे लिखने की सारे भारत में प्रथा रही है। ताड़पत्र और भुर्जपत्र पर लिखी गई सारी उपलब्ध हस्तलिपियाँ इसी तरह की कलमों से लिखी गईं हैं।

लिखने के औजारों के सूचक शब्द इस प्रकार हैं–

1. **वर्णक–** इस पद का शाब्दिक अर्थ वर्ण को बनाने वाला है। यह कलम के अर्थ में प्रयुक्त होता था। 'ललितविस्तर' में एक बिना चिरी हुई छोटी वर्निका या बत्ती का निर्देश है जो पाठशाला के विद्यार्थियों द्वारा लिखने की पट्टी पर वर्ण खींचने में प्रयुक्त होती थी।
2. **वर्णिका–** संस्कृत कोशों में पाया जाने वाला यह शब्द 'वर्णक' का ही दूसरा रूप है।
3. **वर्णवर्तिका–** यह रंगी हुई बत्ती थी। दशकुमारचरित में इसका निर्देश है।
4. **ब्रश या तूलिका**–साधारणतया ब्रुश के अर्थ में इसका प्रयोग होता था।
5. **शलाका–** इसका अर्थ था लौह लेखनी या खोदनी।

लेखन कला से संबंधित अन्य साधन परकार और रूल थे। परकार केवल ज्योतिर्विदों द्वारा वृत्तों और एक दूसरे को काटते हुए वृत्तों से युक्त कुण्डलियाँ बनाने में और कभी–कभी ग्रन्थ के अध्यायों के अन्त में कुछ लेखकों द्वारा कलात्मक आकृतियाँ बनाने के लिए प्रयुक्त होता था। इन कार्यों में प्रयुक्त होने वाले परकार विशिष्ट रूप से परिशुद्ध होते थे। सीधी और समानान्तर रेखाओं के खींचने के लिए रूल का प्रयोग होता था। यह लकड़ी का एक टुकड़ा था जिस पर बराबर दूरी पर डोरियाँ लगी रहतीं थीं। इसे रेखापटि या समासपटि कहते थे।

रंग–पत्थर, ईंट, धातु इत्यादि कड़े पदार्थों पर लिखने के लिए जहाँ खुदाई या अंकन आवश्यक था वहाँ स्याही या किसी प्रकार के रंग की आवश्यकता नहीं थी। ऐसी परिस्थिति में छेनी या बरमें में काम चल जाता था, यद्यपि बाद को कहीं–कहीं रंग का प्रयोग भी होता था। किन्तु भूर्जपत्र, ताडपत्र, कागज, कपड़ा, चमड़ा इत्यादि कोमल पदार्थों पर लिखने के लिए किसी न किसी प्रकार की स्याही या रंग का प्रयोग होता ही था।

भारत में स्याही के लिए प्रयुक्त शब्द 'मसि' या 'मसी' था। ये शब्द गृह्यसूत्रों में जो निश्चय ही ईसवी सन् के पूर्व लिखे गये थे, बहुलता से मिलते हैं। जहाँ तक 'मसि' या 'मसी' शब्द की व्युत्पत्ति का सम्बन्ध है, यह संस्कृत धातु 'मस्' (हिंसायाम्) (कुचलना या कूटना) से निकला है। स्याही को तैयार करने में इसके घटक कूटे और मिलाये जाते थे, इसलिए इसके लिए 'मसी' शब्द का प्रयोग होता था। हिन्दी के 'मसलना' शब्द में इस शब्द का मूल अर्थ अब भी सुरक्षित है। भारतवर्ष के किन्हीं भागों में स्याही के लिए प्रयुक्त होने वाला शब्द मेला है। इस व्यवहार के आधार पर बेनफी, हिन्क्स तथा बेबर ने ग्रीक शब्द मेलस से मेला पद को निकालने का प्रयास किया है। बूलर ने प्रस्ताव किया कि मेला शब्द देशी भाषा के मैला शब्द से व्युत्पन्न है

और इसका अन्यदेशीय मूल खोजना अनावश्यक है। किन्तु मेला शब्द की अधिक सम्भव व्युत्पत्ति संस्कृत मेल (मिलाना) धातु से है। मेला शब्द का स्पष्ट अर्थ मिलाने की अवस्था है, जो स्याही की तैयारी में अनेक घटकों के मिश्रण का सूचक है। स्याही के अर्थ में मेला शब्द का प्रयोग संस्कृत लेखकों द्वारा भी हुआ है। उदाहरणार्थ सुबन्धु ने **'मेलनन्दयते'** पद का प्रयोग किया है। संस्कृत कोशों में मसीपात्र के लिए प्रयुक्त शब्द 'मेलनन्द', 'मेलन्धु', 'मेलन्धुक' है। इससे भी स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत लेखक 'मेला' शब्द से भली भाँति परिचित थे। तथापि मसी शब्द का प्रयोग अतिबहुल था तथा स्याही के बर्तन के लिए प्रायः 'मसिपात्र', 'मसिभांड' और 'मसिकुपिका' शब्द प्रयुक्त होते थे।

बोध प्रश्न–1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइये।**

   I. दिल्ली में स्थित स्तम्भलेख का उदाहरण कौन है। (मेहरौली लौह स्तम्भ/नागार्जुनीकोंडा लौह स्तम्भ)

   II. भारत में स्याही के लिए कौन सा शब्द प्रयोग होता था। (मसि/चूना)

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।**

   I. स्याही के बर्तन के लिए.........शब्द का प्रयोग होता था। (मसिकुण्ड/सरोवरकुण्ड)

   II. नीति सम्बन्धी सूक्तियों का प्रयोग...........प्राप्त होता है। (सोना पर/ताँबा पर)

बोध प्रश्न–2

1. लेखन सामग्री प्रस्तर को स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

2. लेखन सामग्री सोना एवं ताँबा को स्पष्ट कीजिए

   ....

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 1

1. प्राचीन भारत में लेखन सामग्री को स्पष्ट कीजिए?

14.3 सारांश

लेखन सामग्री के रूप में वस्त्र, चर्म, काष्ठ, मिट्टी से निर्मित ईंट, बर्तन, शंख, सोना, चाँदी, कास्य, लोहा, पीतल इत्यादि का भी उपयोग किया गया है। वस्त्र, चर्म जैसे पदार्थों को प्रस्तर इत्यादि के समान तैयार किया जाता था। इस प्रकार **इकाई–14 लेखन साधन–पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि** के अर्न्तगत लेखन साधन पत्थर , स्तम्भ, एवं धातुओं के प्लेट सोना, ताँबा, पीतल, कांसा, लोहा और पेन, ब्रश, रंग इत्यादि के बारें में अध्ययन किया गया है।

14.4 शब्दावली

प्रस्तर	–	पत्थर
स्तम्भ	–	खम्भा
ताम्र	–	ताँबा
लौह	–	लोहा

लेखन साधन–पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि

14.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- अभिलेखमंजूषा, रणजीत सिंह सैनी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन दिल्ली–2000
- उत्कीर्णलेखपंचकम्, झा बन्धु, वाराणसी, 1968
- उत्कीर्णलेखस्तबकम्, जियालाल कम्बोज, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
- भारतीय अभिलेख, एस.एस.राणा, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, 1978
- भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गौरीशंकर, हीराचन्द ओझा, अजमेर, 1918
- प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र और अभिलेखिकी, नारायण, अवध किशोर एवं ठाकुरप्रसाद वर्मा, वाराणसी 1970
- भारतीय पुरालिपि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, राजबली पाण्डेय, 1978
- भारतीय पुरालिपि शास्त्र, ब्यूलर जार्ज, (हिन्दी अनु.) मंगलनाथ सिंह, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली 1966
- अक्षरकथा, मुले गुणाकर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली 2003
- लेखनकथा का इतिहास (खण्ड 1–2), ईश्वरचन्द्र राही, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उ.प्र. 1983
- भारतीय पुरालिपि विद्या, डी.सी सरकार, (हिन्दी अनु.) कृष्णदत्त वाजपेयी, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1996
- भारतीय पुरालेखों का अध्ययन, शिवस्वरूप सहाय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
- Selected Inscriptions (Vol.1) D.C.Sarkar, Calcutta, 1965
- Indian Chronlogy (Solar, Lunar and Planetary), Pillai, Swami Kannu & K.S. Ramchadran Asian Education Service 2003
- Text Book of Indian Epigraphy, K. Satymurty, Lower Price Publication, Delhi 1992

14.6 बोध प्रश्न/उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) मेहरौली लौह स्तम्भ (ii)मसि
2. (i) मसिकुण्ड (ii)सोना पर

बोध प्रश्न–2

1. जब से मनुष्य ने गुहा की दीवार पर पहली खरोच मारी, वह अपनी कला की स्थिरता से प्रभावित हुआ। **'प्रस्तर लेखन'** टिकाऊपन का सूचक बन गया। जब लेखनकला व्यापक हुई, वे सभी आदेश जो महत्वपूर्ण और स्थायी समझे गये, पत्थर पर खोदे गये। बौद्ध सम्राट अशोक ई. पू. की तीसरी शताब्दी में विशेषरूप से निर्देश करते हैं कि उन्होंने अपने आदेशों को पत्थर पर इसलिए खुदवाया कि वे बहुत समय तक बने रह सके। कोमल लेखन के अन्य और लचीले उपकरणों के प्रचार के बावजूद स्थायी विवरणों के लेखन के लिए पत्थर का प्रयोग वर्तमान काल तक जारी रहा है। लेखन के माध्यम के रूप में पत्थर निम्नांकित रूपों में प्रयुक्त हुआ है–चिकनी की गयी या कभी–कभी खुरदरी चट्टान, स्तम्भ, पट्टिका, मूर्ति का आसन या पृष्ठभाग, पिटक या बर्तन की कोरें तथा ढक्कन, स्फटिक, मन्दिर की दीवारें, फर्श, तथा स्तम्भ, गुहाएँ। जहाँ तक प्रस्तर लेखन के विषय का सम्बन्ध है, उसमें निम्नांकित प्रकार सम्मिलित है–राजों के आदेश या घोषणायें, राजप्रशस्ति, राजाओं के बीच की सन्धियाँ, स्वीकृतियाँ (समझौते), दान, स्मृतियाँ, समर्पण, भूमि दान, काव्य स्त्राव, साहित्यिक कृतियाँ, कभी–कभी बृहत् धार्मिक ग्रन्थ।

   वर्णों के खोदने या अंकित करने के पहले एक विशेष शिला, प्रस्तर का पट्ट या खण्ड चुना जाता था, उसे छीलकर चिकनाकर लिया जाता था और तब घिसकर चिकना किया जाता था। ऐसे अपवाद भी प्राप्त हुए हैं कि लिखने के लिए खुरदरे पत्थर का प्रयोग किया गया है। पहले पत्थर पर सीधी रेखाएँ खीचीं जातीं थीं, फिर सुलेखक उन पर स्याही या रंग से लिखता था और अन्त में खोदने वाला वर्णों को खोदकर अंकित कर देता था। कलात्मक प्रतीति होने के लिए पार्श्व, शीर्ष एवं अघोभाग में स्थान रिक्त छोड़ दिया जाता था। कभी–कभी लेखन क्षेत्र चारों ओर के किनारों से नीचा कर दिया जाता था। यदि खोदने के समय कोई टुकड़ा उखड़ जाता तो इस प्रकार के खोखले को किसी रूप्य वस्तु (प्लास्टिक) से भर दिया जाता था और तब उस पर अक्षर लिखे जाते थे। खुदे हुए विषय के प्रारम्भ तथा अन्त में प्रायः कोई मांगलिक या धार्मिक चिन्ह भी खोद देते थे।

2. **सोना**–बहुमूल्य होने के कारण इस धातु का प्रयोग बहुत ही कम होता था। तथापि बौद्ध जातकों में सोने पर धनी दुकानदारों के महत्वपूर्ण कौटुम्बिक लेखों, राजादेशों, काव्य छन्दों तथा नीति सम्बन्धी सूक्तियों का प्रायः निर्देश मिलता है। किन्तु आसानी से माना जा सकता है कि जातक ग्रंथों में समाज का आदर्श चित्र प्रस्तुत किया जाता था और उसमें काल्पनिक तत्वों का विशिष्ट स्थान है। बर्नेल का कथन है कि राजपत्रों तथा भूमिदान के लिए भी सोना प्रयुक्त होता था। कनिघंम ने खरोष्ठी में दान अभिलेख वाला एक स्वर्णपट्ट तक्षशिला के समीप गंगु स्तूप से प्राप्त किया था। बरमा में हाज्वा ग्राम में दो स्वर्णपत्र पाये गये हैं। जिन पर बौद्ध सूत्र **'ये धम्मा हेतुप्रभवा'** इत्यादि तथा इसके बाद पालि छन्द लिखा था। लिपिशास्त्रानुसार उनका सम्बन्ध ईसा की चौथी या पाँचवी शती से है।

ताँबा—लिखने के लिए सब से अधिक प्रयोग में आने वाली धातु ताँबा है। अति प्राचीन काल से यह प्रयोग में आ रहा है। अभिलिखित ताँबे का पत्र या टुकड़ा अभिलेख के विषय के अनुसार ताम्रपट्ट, ताम्रपत्र, ताम्रशासन, शासनपत्र या दानपत्र कहलाता था। भूमिदान पत्रों को छोड़कर जो स्थायी रूप से ताँबे पर ही खोदे जाते थे और संस्कारपूर्वक प्रतिगृहीता को दिये जाते थे, ताँबे पर लिखे जाने वाले विषय प्रायः वही होते थे जो पत्थर पर।

लेखन साधन—पत्थर, स्तम्भ, धातुओं की प्लेट, पेन, ब्रश रंग इत्यादि

अभ्यास प्रश्न—

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY